मत्स्य उद्योग के

ग्रामीण क्षेत्रों में तालाबों में मछली पकड़ने का काम आय का अच्छा स्रोत है

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 39 अंक 8 ज्येष्ठ-आषाढ़ 1916, जून 1994

कार्यकारी संपादक	:	बलदेव सिंह मदान
उप संपादक	:	ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन)	:	एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक	:	बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक	:	जॉन नाग
व्यापार कार्यकारी	:	बी० एस० रावत
आवरण सज्जा	:	एम. एम. मलिक

एक प्रति : 3.00 रु० वार्षिक चंदा : 30 रु०

फोटो साभार : रमेश चंद्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय

इस अंक में

उपयुक्त तकनीक के माध्यम से ग्रामीण विकास	केसर सिंह	3
ग्रामीण अर्थव्यवस्था में लघु और कुटीर उद्योगों की भूमिका	डा० कृष्ण कुमार सिंह	5
प्रधानमंत्री की रोज़गार योजना : युवाओं के लिए आशा की किरण		7
भारत में मत्स्य उद्योग के विकास की संभावनाएं	संजीव झा	9
मत्स्य उत्पादन एवं पर्यावरण	डा० ए० पी० राव	12
ग्रामीण बेरोजगारी - स्वरूप और निदान	डा० राम राव भोंसले	16
चुनौतियों से भरा है सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य	डा० नन्दलाल	18
अपने-पराये (कहानी)	डा. शीतांशु भारद्वाज	21
अपारम्परिक ऊर्जा : समस्या एवं संभावनाएं	पी के शर्मा एवं एस. के. शर्मा	24
चरवाहा विद्यालय	अजय कुमार सिन्हा	28
भारतीय नारी : कर्मक्षेत्र की मिटती लक्ष्मण रेखा	डा. देव नारायण महतो	30
पौष्टिक टमाटर : सेब गरीबों का	डा० सीताराम सिंह 'पंकज'	33
नदियों को निगलते उद्योग और महानगर	मंजू पाठक	34
उत्तर प्रदेश के ग्रामीण विकास में पंचायत राज का योगदान	डा० गणेश कुमार पाठक	36
खेती के लिए जैविक खादें	अभय कुमार जैन	37
आर्थिक उदारीकरण पिछड़े वर्ग व पिछड़े क्षेत्रों के प्रतिप्रेक्ष्य में	हिम्मत सिंह	39

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।
दूरभाष : 384888

पाठकों के विचार

'कुरुक्षेत्र' का यह फरवरी 94 अंक सारगर्भित लेखों से परिपूर्ण है। भारत के गांवों में गरीबी वर्तमान परिदृश्य की ज्वलन्त समस्याओं में एक है। आपने इस अंक के द्वारा करोड़ों पाठकों-विचारकों का इस देशव्यापी गंभीर समस्या पर सोचने हेतु ध्यान आकर्षित किया।

डॉ. कु. पुष्पा अग्रवाल द्वारा लिखित लेख 'गांव की गरीबी दूर करने में कुटीर उद्योगों की भूमिका' उल्लिखित मंतव्य भारत जैसे देश जिसकी तीन-चौथाई आबादी गांवों में रहती है, समीचीन प्रतीत होता है। महात्मा गांधी का भी विचार था कि भारत के गांवों में कुटीर उद्योगों के व्यापक प्रचार-प्रसार के द्वारा ही गरीबी उन्मूलन में सहायता मिल सकती है तथा ग्रामीण गरीब जनसंख्या स्थानीय स्तर पर ही अपनी सुख-सुविधाओं का पूरा लाभ उठा सकती है।

केवल सरकारी प्रयासों से ही नहीं बल्कि प्रत्येक भारतीय नागरिक के भगीरथ कोशिशों के द्वारा इस महाविकराल समस्या पर काबू पाया जा सकता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना, साक्षरता अभियान, जनसंख्या-नियंत्रण, रोजगार सृजन आदि योजनाओं को नियोजित कार्यक्रमों द्वारा गांवों में पूरी निगरानीपूर्ण तरीके से लागू किया जाना आवश्यक है। मूलतः बढ़ती हुई जनसंख्या ही विकास कार्यक्रमों की गति को वांछित उपलब्धियों तक पहुंचने से रोकती है। अतः मेरे विचार से जनसंख्या-नियंत्रण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। साथ ही साथ समन्वित विकास कार्यक्रमों को देश के विभिन्न भागों में स्वयंसेवी संगठनों तथा सरकारी एजेन्सियों द्वारा विचार-विमर्श के उपरान्त तैयार किया जाना चाहिए ताकि गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम को सही दिशा दी जा सके।

आलोक कुमार,
सुपुत्र श्री आर.बी.पी. गुप्ता,
राजकीय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय,
भागलपुर–812001

'कुरुक्षेत्र' का मार्च 1994 अंक पढ़ा। पर्यावरण प्रदूषण आज विश्व के सामने एक चुनौती बनकर खड़ा है। सम्पूर्ण जीव-प्राणी विषैले धुएं की कोठरी में बंद घुटन महसूस कर रहे हैं। 21वीं शताब्दी के प्रवेश द्वार पर भी मनुष्य जंगलों का तथा रेगिस्तान मनुष्यों का पीछा करता नजर आ रहा है। डा० कृष्ण कुमार सिंह की "कौन है?" शीर्षक लघुकथा रोचक एवं ज्ञानवर्धक लगी। इन्होंने गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। सबको पीपल का एक-एक पेड़ लगाने का संकल्प लेना चाहिए। डा० देवनारायण महतो, राजीव रंजन वर्मा, डा० अधिवेश राय, डा० एम० के० राय, राजेश हजेला, अरुण कुमार पाठक के अतिरिक्त अन्य लेखकगण भी बधाई के पात्र हैं। सार तत्व के रूप में सम्पादक को विशेष बधाई।

डा० पारसनाथ सिंह,
प्रधानाचार्य,
हर प्रसाद दास जैन कालेज,
आरा, बिहार

'कुरुक्षेत्र' के फरवरी 1994 के अंक में गांवों से गरीबी दूर करने के लिए जो सुझाव दिये गये हैं, वे वास्तव में सराहनीय हैं। भारतीय समाज की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती हैं। यदि गांवों से गरीबी को दूर कर दिया जाये तो बेरोजगारी, अनपढ़ता, अंधविश्वास, शहरों को पलायन आदि समस्याएं स्वतः ही समाप्त हो जायेंगी। वास्तव में गरीबी ही भारतीय समाज की समस्त आर्थिक एवं सामाजिक बुराइयों की जड़ है। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं का उद्देश्य विकास द्वारा जीवन स्तर को ऊंचा उठाना अर्थात गरीबी दूर करना ही रहा है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम इत्यादि योजनाओं द्वारा सरकार गांवों की गरीबी दूर करने के लिए कृतसंकल्प है। गांवों में कुटीर तथा लघु उद्योगों के विकास द्वारा भी गरीबी पर प्रहार किया जा सकता है। लेकिन रोजगार के अवसरों को बढ़ाने के साथ-साथ अजगर के समान विकराल रूप धारण करती जनसंख्या को काबू में रखना भी नितान्त आवश्यक है। जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के साथ-साथ यदि देश में उपलब्ध जनशक्ति को प्राप्त संसाधनों के साथ उचित परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाये तो सोने पर सुहागा होगा।

शशी के० पराशर,
ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, विभाग,
हिमाचल प्रदेश, विकास खण्ड, बैजनाथ

(शेष पृष्ठ 15 पर)

उपयुक्त तकनीक के माध्यम से ग्रामीण विकास

✍ केसर सिंह

हमारे भारत वर्ष का भवन गांव रूपी ईटों से बना है। इन ईटों की मजबूती में ही हमारे देश का आधार अन्तर्निहित है। हमारी आबादी का लगभग 74 प्रतिशत भाग इन्हीं गांवों में निवास करता है। लगभग 50 प्रतिशत गांव दुर्गम स्थानों में स्थित हैं। सामाजिक व आर्थिक पिछड़ापन इन गांवों की विशेषता है। ये जीविकोपार्जन के लिये कृषि, पशुपालन एवं वानिकी पर मुख्य रूप से निर्भर हैं। अतीत काल से लेकर अब तक भारतीय ग्रामीण समुदाय की निरन्तरता एवं स्थायित्व इसकी प्रमुख विशेषता रही है। ग्रामीण समाज के उत्थान के लिए आवश्यक है आधुनिक तकनीक चाहे वह कृषि का क्षेत्र हो, पशुपालन हो या लघु और कुटीर उद्योग हों। हमारी अर्थ व्यवस्था के पहियों की गति के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में उपयुक्त तकनीकी विकास अत्यावंश्यक है ताकि उसके माध्यम से ग्रामीण समाज का कायापलट हो सके।

स्वाधीनता के हर्ष एवं उत्साह की पावन वेला में हम बहुत प्रसन्नचित्त थे। लेकिन हमारे कृषक, दस्तकार, कारीगर एवं श्रमिक पंखविहीन चिड़ियों की भांति विकास की उड़ान भरने के लिये तड़प रहे थे। मानसून की दया पर आश्रित कृषि तथा तत्कालीन लघु और कुटीर उद्योग 40 करोड़ आबादी का पेट नहीं भर पा रहे थे। विडम्बना यह थी कि हमारे ग्रामीण जनों ने, कुछ को छोड़कर, सभी ने, नंगे-अधनंगे, भूखे (पौष्टिकता का अभाव) झुग्गी-झोपड़ियों और खुले आकाश के नीचे जीवन यापन करना प्रकृति का नियम मान लिया था। समसामयिक समस्याओं ने तत्कालीन राजनीतिज्ञों और समाज सुधारकों का ध्यान ग्रामीणांचल के चहुमुखी विकास की ओर आकृष्ट किया। वर्तमान में हम, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में निरन्तर प्रवाहमान, रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से उन लोमहर्षक परिस्थितियों से काफी कुछ उबर चुके हैं। उत्साहवर्धक तथ्य यह है कि इन वर्षो में हम हमारी योजनाओं का 50 प्रतिशत से भी ज्यादा ग्रामीण विकास को केन्द्र बिन्दु मान कर खर्च कर रहे हैं, जिससे संभावित विकास का मार्ग प्रशस्त हो रहा है।

अब तक हम सात पंचवर्षीय योजनाएं तथा कुछ वार्षिक योजनाएं आत्मसात् कर चुके हैं। वर्तमान में आठवीं पंचवर्षीय योजना प्रवाहमान है। इस योजना के अन्तर्गत सरकार, इस आधार पर कार्यक्रम बनाये जाने के लिये कृतसंकल्प है कि कार्यक्रम जनता लागू करे और सरकार उसे सहयोग दे। साथ ही यह आश्वासन दिया गया है कि गांव और पंचायत स्तर पर योजना के क्रियान्वयन की देख-रेख के लिये, उपयुक्त तंत्र का निर्माण किया जायेगा अर्थात ग्रामीण विकास के लिए वहां की जनता को भागीदार बनाया जायेगा। इन योजनाओं में लोगों के जीवन स्तर को उठाने के लिए बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना, कृषि विकास, लघु और कुटीर उद्योग के विस्तार के साथ-साथ ग्रामवासियों के लिए अनेक ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की शुरूआत की गई है। इसमें समन्वित ग्रामीण विकास योजना, सामुदायिक विकास योजना, ग्रामीण युवकों के स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण योजना, जवाहर रोजगार योजना एवं इंदिरा आवास योजना आदि प्रमुख हैं। कृषि क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और लघु कुटीर उद्योगों के विकास-विस्तार के लिये खादी ग्रामोद्योग आयोग प्रयत्नशील है। विज्ञान और तकनीकी अनुसंधान के लिये भी अनेक सरकारी संस्थाएं कार्यरत हैं, जिनमें वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्रीय शोध संस्थान, केन्द्रीय कृषि शोध संस्थान आदि प्रमुख हैं।

हमारे यहां आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी का सबसे ज्यादा उपयोग रक्षात्मक एवं विलासिता पूर्ण कार्यों में किया जा रहा है। परिणामस्वरूप, आधुनिक युग में भारतीय बाजारों में कम्प्यूटर, टेलीफोन, टेलीविजन, कार, वातानुकूलित मकान, रेडियो, कीमती वस्त्र, शक्ति चालित यातायात के साधन आदि का द्रुतगति से उपयोग हो रहा है। कृषि कार्य में खेतों की जुताई से लेकर अन्न-संग्रह तक आधुनिक यंत्रों के प्रयोग की योजना का शुभारम्भ कर दिया गया है।

देश का ग्रामीण समाज प्रधानतः कृषि एवं कृषि पर आधारित पारम्परिक लघु तथा कुटीर उद्योगों पर निर्भर है, लेकिन शहरों और महानगरों के आस-पास के गांवों की स्थिति बहुत अलग-थलग है। प्रतिदिन बढ़ती आबादी तथा औद्योगिक विकास के कारण शहरों के आस-पास के ग्रामों की कृषि योग्य भूमि का अतिक्रमण किया जा रहा है और गगनचुम्बी इमारतें तथा उद्योग स्थापित किये जा रहे हैं, जिसके फलस्वरूप पारम्परिक धन्धों में लगे कारीगरों, जुलाहे, बढ़ई आदि दस्तकारों को आजीविका के लिये शहरों पर निर्भर होना पड़ रहा है।

निःसन्देह हमारे ग्रामीण समाज की आर्थिक, राजनीतिक व

सामाजिक बनावट इतनी कमजोर है कि वह "बटन दबाया और सम्पूर्ण कार्य हो गया" वाली तकनीक को अपनाने में स्वयं को समावेशित नहीं कर पा रही है। हालांकि विकास की दौड़ में हमने विश्व में अपना एक विशेष स्थान बना लिया है, लेकिन ग्रामीण समस्याओं की परिधि में आर्थिक समस्याएं यथा कृषि पर आश्रितता, कृषि-ऋण-ग्रस्तता, पशु पालन का परम्परागत स्वरूप, सामाजिक समस्याएं जैसे छुआछूत, अंध विश्वास, जाति-पाति, तथा स्वास्थ्य एवं शिक्षा का अभाव आज भी है। आम आदमी इस विचार से सहमत है कि ग्राम्य समस्याओं का बुनियादी कारण गरीबी एवं अशिक्षा है, जिसमें गरीबी को मिटाने के लिए ग्रामीण समाज में व्याप्त बेरोजगारी का अन्त करना होगा। इसके लिए "सबके लिये काम" की नीति को अपनाना होगा और भेद-भाव को भुलाना होगा। इस विचार के पोषण के लिये महात्मा गांधी जी का निम्न वक्तव्य उद्‌धृत किया जा सकता है: "अगर 300 लाख लोगों के बजाय 30 हजार लोगों की मदद से हम अपने देश की जरूरत के सामान का उत्पादन करें तो मुझे कुछ नहीं कहना है, लेकिन यह ध्यान रखें कि 300 लाख लोग बेकार न रह जाएं।"

गांधी जी के विचारों को भूलाकर गांव से शहर तक यंत्रीकरण किया जा रहा है जिससे बेरोजगारों की फौज तैयार हो रही है। साथ ही उपभोगवादी सभ्यता के कारण पर्यावरण और मानवीय भावना दोनों असन्तुलित और विक्षिप्त हो रही हैं। देश के कोने-कोने में आतंकवाद और अलगाववाद की गतिविधियां रह रह कर सिर उठा रही हैं।

आधुनिक विचारक, अर्थशास्त्री और बुद्धिजीवियों का मानना है कि राष्ट्रीय योजनाओं का आधार "सबके लिये काम" होना चाहिये। भारत के संदर्भ में ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व के लिये यह बात स्वीकार्य होनी चाहिये कि प्रदूषण रहित वातावरण, शोषण मुक्त समाज, सबके लिये काम की व्यवस्था तथा विपुल मात्रा में उत्पादन के माध्यम से ही ग्रामीण विकास संभव है। इसके लिये भारत जैसे देशों को अपनी परिस्थिति के अनुरूप ही तकनीक खोजनी चाहिये। ऐसा नहीं होना चाहिए कि हमारे देश में हरित क्रान्ति द्वारा खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता का दावा करते हुए भी हमें खुले बाजार में गेहूं का आयात करना पड़ा है। इसका कारण व्यापारियों द्वारा जमाखोरी एवं किसानों द्वारा पैदावार को बाजार में नहीं लाना बताया जाता रहा है। ऐसा सरकार की अनदेखी एवं किसानों को फसलों की पर्याप्त कीमतें नहीं मिलने से होता है। इस उदाहरण से यह स्पष्ट होता है कि अत्यधिक जनसंख्या वाले इस देश में नियोजित कार्यक्रम जनता की आवश्यकताओं और समस्याओं को मद्देनजर रख कर बनाये जाने की जरूरत है।

किसी भी देश के लिए उपयुक्त तकनीक वही है, जो देश के प्राकृतिक और सांस्कृतिक संसाधनों तथा आर्थिक, सामाजिक व भौगोलिक बनावट के अनुरूप हो तथा मानवीय पूंजी व मशीन के बीच सम्पर्क-सूत्र का कार्य करे। इस दृष्टि से हमारे देश में "श्रम साधन तकनीक" उपयुक्त होगी। "श्रम साधन तकनीक" का उपयोग खासकर अधिक जनसंख्या और धन की कमी की स्थिति में किया जाता है और ये दोनों ही हमारे राष्ट्र की सर्वाधिक ज्वलंत समस्याएं हैं। इस तकनीक के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध संसाधनों पर आधारित कुटीर और लघु उद्योग की आवश्यकता महसूस होगी, जिससे अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा और बेकारी की समस्या दूर होगी। इसके अतिरिक्त ग्रामीण समाज पर कम से कम आर्थिक बोझ पड़ेगा तथा प्रदूषण-विहीन वातावरण कायम रह सकेगा। गांव से प्राप्त कच्चा माल, श्रम और पूंजी का उपयोग गांव में ही होगा। इससे गांवों में आधारभूत ढांचे में परिवर्तन होगा और शहरों की ओर भागने की ग्रामीण जन की प्रवृति पर अकुंश लगेगा।

इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में कम लागत, सरल उपयोग, ऊर्जा की सहज कुशलता, मशीनों का कम प्रयोग एवं पूर्ण रोजगार से सम्बन्धित कार्यक्रमों एवं उद्योगों को प्रोत्साहन देना चाहिए। उपर्युक्त विस्तृत संकेतों से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज का कल्याण करने में "श्रम पर आधारित तकनीक" एक सशक्त माध्यम बन सकती है।

अतः ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने, आर्थिक विषमता को दूर करने, शहरों की ओर पलायन रोकने, क्षेत्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति एवं ग्रामीण जीवन स्तर में सुधार के साथ ही साथ हमारी वर्षो पुरानी परम्पराओं और गौरवशाली इतिहास की झलक प्रदान करने वाली ग्राम्य संस्कृति को संरक्षण प्रदान करने हेतु हमें विकास का ऐसा ताना-बाना बुनना है, जिसका केन्द्र आधुनिक उपयुक्त परिमार्जित एवं परिष्कृत तकनीक में निहित है।

टी. 33, प्राध्यापक आवास,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में लघु और कुटीर उद्योगों की भूमिका

✍ डा० कृष्ण कुमार सिंह

भारत गांवों का देश है। यहां बेरोजगारी, अर्द्धबेरोजगारी और मौसमी बेरोजगारी का साम्राज्य, पूंजी का अभाव, भौतिक ाधनों के सीमित होने के साथ-साथ उद्यमियों की कमी, कृषि र बढ़ती जनसंख्या का बोझ आदि समस्याएं हैं। ऐसी स्थिति ं लघु और कुटीर उद्योगों का गांवों के आर्थिक, सामाजिक और ाजनीतिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान हो जाता है। हालांकि हमारे श के लिए लघु और कुटीर उद्योगों के विस्तार की सोच नयी हीं है बल्कि भारतीय कारीगरों द्वारा 16वीं शताब्दी तक एक पौंड ई से 400 किलोमीटर लम्बा कपड़ा बुन लेना तथा विश्व प्रसिद्ध ाका की मलमल जो एक अंगूठी के भीतर से पूरे थान का निकल ाना प्रामाणिकता के साथ-साथ आज भी अचम्भे में डाल देता । स्वर्गीय श्री रानडे ने लिखा है– "ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व मिस्र ी पिरामीड में ममी बढ़िया किस्म की भारतीय मलमल में लिपटी ई पायी गयी।" उस समय तक इन उद्योगों को भारतीय नवाबों ा संरक्षण प्राप्त था। संसार अर्द्धसभ्यता की स्थिति में था जबकि ारत वाणिज्य और औद्योगिक दृष्टि से उन्नति के शिखर पर था। ूती वस्त्र, बहुमूल्य धातुओं, जहाज निर्माण, जवाहरात का काम, क्काशी आदि के लिए भारत विश्व में ख्याति प्राप्त कर चुका ा।

दुर्भाग्यवश ब्रिटिश शासकों की स्वार्थपूर्ण नीतियों ने इन द्योगों को बर्बाद कर दिया। अठारहवीं शताब्दी तक ये उद्योग िसी तरह जीवित रह पाए। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक वशेष के रूप में बचे रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत अपने तीत के अवशेष के उज्ज्वल भविष्य के लिए प्रयासरत है।

प्रायः लघु एवं कुटीर उद्योग एक ही अर्थ में प्रयोग किए जाते । लेकिन भारतीय परिस्थिति में इन दोनों के बीच अन्तर है। वित्त आयोग 1949-50 के अनुसार "अगर कोई कारीगर स्वयं ा परिवार की मदद से प्रमुख या सहायक के रूप में किसी वस्तु ा उत्पादन करता है तो उसे कुटीर उद्योग कहेंगे।"

भारत सरकार ने 6 अगस्त 1991 को एक नयी औद्योगिक ीति की घोषणा की। इस नीति के तहत अति लघु इकाइयों की ूंजी निवेश सीमा दो लाख रुपये से बढ़ाकर पांच लाख रुपये कर ी गयी है। लघु उद्योगों, सहायक उद्योगों व निर्यातोन्मुखी इकाइयों ी संयन्त्र और मशीनरी में पूंजी निवेश की सीमा को क्रमशः 60 लाख रुपये तथा 75 लाख रुपये तक बढ़ाये जाने की भारत सरकार पहले ही घोषणा कर चुकी है।

महत्व

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कथन "भारत का मोक्ष उसके लघु एवं कुटीर उद्योगों में निहित है" आज भी प्रासंगिक है। वे जानते थे कि एक समय ऐसा आएगा जब हमारे हाथ बेकार हो जाएंगे और उत्पाद साधन सीमित तथा पूंजी का अभाव तो है ही। इस समस्या का समाधान आज नहीं तो कल करना ही होगा। स्पष्टतः लघु और कुटीर उद्योगों में समाधान परिलक्षित होता है। इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ये उद्योग भारत के ग्रामीण अर्थव्यवस्था की क्षमताओं और उसके भावी विकास की कुंजी कहे जाते हैं।

वर्तमान में ग्रामीण अर्थव्यवस्था गरीबी, बेरोजगारी, अर्द्धबेरोजगारी, मौसमी बेरोजगारी के कारण गंभीर तनाव से गुजर रही है। चूंकि लघु एवं कुटीर उद्योगों में कम पूंजी के द्वारा अधिक हाथों को रोजगार दिया जाना संभव है, इसीलिए रोजगार के अवसरों को उपलब्ध कराने में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। बड़े उद्योग की एक इकाई में एक लाख रुपये के विनियोग से केवल चार बेकार लोगों को रोजगार मिलता है जबकि लघु इकाई में एक लाख रुपये के विनियोग से 20 से 25 बेकार लोगों को तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 70 लोगों को रोजगार दिया जा सकता है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे उद्योगों की स्थापना से महिला श्रम का सदुपयोग हो जाता है जबकि बड़े उद्योगों में ऐसा संभव नहीं है। लघु एवं कुटीर उद्योगों में तेजी-मंदी का कोई असर नहीं होता जबकि बड़े उद्योगों में इस दौर से व्यापक रूप में बेरोजगारी फैलने की संभावना रहती है।

ग्रामीण बेरोजगारों का शहरों की ओर पलायन एक चुनौती बन कर खड़ा है। लघु एवं कुटीर उद्योगों के अभाव में ग्रामीणों के शहरों की ओर पलायन से जहां 1951 में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत 17.3 था वह 1981 में 21 प्रतिशत तथा 1993 में 25.73 प्रतिशत हो गया। अब तो यह और भी बढ़ गया है। परिणामतः शहरों के सामने प्रदूषण जैसी नयी-नयी समस्याएं आ खड़ी हुई हैं। यदि इन्हें गांव में ही रहकर लघु एवं कुटीर उद्योगों

जैसे - टोकरी बनाना, चटाई बुनना, मिट्टी के बर्तन, लोहे के औजार, पत्थर की मूर्तियां, चमड़े का समान, सूत कातना, टी.वी. रेडियो, कैसेट प्लेयर, इलेक्ट्रानिक घड़ियों की मरम्मत तथा छोटे-छोटे हिस्से-पुर्जो का निर्माण, माचिस, अगरबत्तियां, मोमबत्तियां, सावुन, बेंत का समान, खांडसारी, फलों का रस, अचार, मुरब्बे इत्यादि के साथ-साथ पशुपालन, मुर्गीपालन, डेयरी उद्योग, रेशम के कीड़े पालना, शहद उत्पादन, फल सब्जी आदि उत्पादन करने को कहा जाए और इसकी व्यवस्था भी की जाए तो बड़ी हद तक गांव से पलायन कम होगा, लोगों को अतिरिक्त आमदनी होगी तथा बेरोजगारी समाप्त होगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में लघु और कुटीर उद्योगों के अभाव के कारण आर्थिक और सामाजिक असमानता का वातावरण है। अमीरों और गरीबों के बीच की खाई और गहरी होती जा रही है। एक के पास पर्याप्त मात्रा में भूमि और पूंजी तो दूसरे के पास सिर्फ दो कमजोर हाथ। भारतीय रिजर्व बैंक के एक सर्वेक्षण के अनुसार निम्नतम 10 प्रतिशत ग्रामीणों का कुल ग्रामीण सम्पत्ति में केवल 0.1 प्रतिशत हिस्सा है जबकि उच्चतम 10 प्रतिशत ग्रामीण कुल सम्पति के 50 प्रतिशत से अधिक के स्वामी हैं। लघु और कुटीर उद्योगों के जाल बिछाने से आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण होगा और आर्थिक शोषण की संभावना कम होगी।

इन उद्योगों की एक विशेषता यह है कि स्थापना के कुछ ही समय बाद उत्पादन होने लगता है। शीघ्र उत्पादकता के गुण के कारण मुद्रास्फीति का भय कम हो जाता है। औद्योगिक प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण की समस्या के समाधानार्थ इन उद्योगों का महत्व और बढ़ जाता है। लघु और कुटीर उद्योगों के माध्यम से कलात्मक वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहन मिलता है। स्थानीय प्रतिभाओं, विकलांगों, कैदियों, निःसहायों तथा स्थानीय साधनों का समुचित उपयोग किया जा सकता है। साथ ही संचालन तथा प्रबन्ध की सरलता की दृष्टि से भी इनकी महत्ता बढ़ जाती है।

सरकारी प्रयास

लघु एवं कुटीर उद्योगों के व्यापक महत्व को देखते हुए भारत सरकार ने इनके उत्तरोत्तर विकास के लिए अनेक उपाय किये।

योजनाकाल में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर सार्वजनिक क्षेत्र में प्रथम पंचवर्षीय योजना में 42 करोड़ रुपये की राशि व्यय की गई थी, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 187 करोड़, तृतीय में 241 करोड़, तीन वार्षिक योजनाओं (1966-69) में 126 करोड़ रुपये, चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में 243 करोड़ रुपये, पंचम पंचवर्षीय योजना में 593 करोड़ रुपये, वार्षिक योजना 1979-80 में 250 करोड़ रुपये, छठी योजना में 1945 करोड़ रुपये, सातवीं योजना में 3249 करोड़ रुपये व्यय किये गये। इस प्रकार आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि 1952 में जहां 47 करोड़ रुपये व्यय किय गये थे, वहां बढ़कर 1990 में यह व्यय 3249 करोड़ रुपये हो गया। बड़े उद्योगों की प्रतियोगिता से बचने के लिए वर्तमान में 836 मदों का उत्पादन पूर्णतया लघु उद्योगों के लिए सुरक्षित कर दिया गया।

वित्तीय सुविधा

लघु और कुटीर उद्योगों के विकास में निरन्तरता बनाए रखने के लिए सरकार द्वारा अनेक वित्तीय स्रोतों का विस्तार एवं संस्थागत एजेंसियों की सहायता ली जा रही है। राज्य वित्त निगम तथा राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम इन उद्योगों को जोखिम पूंजी प्रदान करना है। अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था बैंकों द्वारा की जाती है। मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण के लिए राज्यों के उद्योग निदेशालय को अधिकृत किया गया है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक भी लघु उद्योगों को वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। लघु उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए 1989 में भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की स्थापना की गयी जिससे आशा बंधी की अब बिचौलियों की भूमिका समाप्त होगी तथा उद्यमियों को सीधा ऋण मिलना शुरू होगा। 2 अप्रैल 1990 से इसने कार्य करना शुरू किया।

समस्या और समाधान

भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों के विकास के लिए लगभग सभी जिलों में जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना कर दी है, परन्तु उद्यमियों की कमी, पूंजी का अभाव, कच्चे माल की कमी तथा विपणन की समस्या के कारण अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में ये उद्योग केन्द्र उतने सफल नहीं हुए जैसी आशा की गई थी। सरकार ग्रामीण क्षेत्र के पढ़े लिखे नवयुवक-नवयुवतियों को पर्याप्त पूंजी, कच्चा माल उपलब्ध कराकर प्रोत्साहित करे तथा उनके उत्पाद के बिक्री की व्यवस्था करे। लघु और कुटीर उद्योगों में बने माल की लागत ऊंची होती है जो बड़े उद्योगों के सस्ते माल के सामने नहीं टिक पाते हैं। उत्पादन लागत में कमी करने के लिए इन्हें सस्ती दर पर कच्चा माल उपलब्ध कराया जाए तथा आधुनिक तकनीक के द्वारा प्रशिक्षण प्रदान कर उपभोग वस्तुओं व निर्यात वस्तुओं का ही उत्पादन ज्यादा किया जाना चाहिए ताकि उपभोग वस्तुओं की खपत ग्रामीण क्षेत्र में ही हो जाए। कभी-कभी देखा जाता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात की कमी के कारण

(शेष पृष्ट 11 पर

युवाओं के लिए आशा की किरण

विकास के प्रतिमान में, विशेषकर जब अर्थ व्यवस्था प्रगति के रास्ते पर तेजी से बढ़ रही हो, रोजगार एक महत्वपूर्ण पहलू होता है। स्व-रोजगार सहित रोजगार सृजन का आर्थिक नीति के साथ सामंजस्य बिठाया जाना चाहिए। पिछले कुछ दशकों में भारतीय विकास की योजनाओं में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए समय-समय पर अनेक प्रयास किए गए हैं। इस क्रम में प्रधानमंत्री की रोजगार योजना ताजा प्रयास है, जिसका उद्देश्य शिक्षित बेरोजगार युवाओं को स्व-रोजगार उपलब्ध कराना है।

2 अक्तूबर, 1993 को प्रारंभ की गई इस योजना को पूर्ण उत्साह और इच्छाशक्ति के साथ लागू किया जा रहा है। इसका उद्देश्य शिक्षित बेरोजगार युवाओं को उद्योग, सेवा और व्यापार के क्षेत्रों में अपना उद्यम प्रारंभ करने के लिए अवसर प्रदान करना है। इस योजना के अंतर्गत सात लाख लघु उद्यम स्थापित करके दस लाख से अधिक लोगों को लाभ मिलेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसार

इस योजना के अंतर्गत उद्यमियों के चयन, प्रशिक्षण और परियोजना की रूपरेखा को तैयार करने में प्रतिष्ठित गैर-सरकारी संगठनों को भी सम्मिलित करने का प्रयास किया जा रहा है। इस योजना को 1993-94 से शहरी क्षेत्रों में और 1994-95 से पूरे देश में लागू किया जायेगा। इसके बाद से, शिक्षित बेरोजगार युवाओं के लिए मौजूदा स्व-रोजगार योजना को प्रधानमंत्री की रोजगार योजना में मिला दिया जायेगा।

इस योजना के अंतर्गत, व्यक्तिगत मामलों में एक लाख रुपये तक का ऋण उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इस ऋण की मात्रा उद्यम की किस्म पर निर्भर करेगी। वर्ष 1993-94 में 40,000 लाभार्थियों का लक्ष्य रखा गया है। 1994-95 और इसके बाद से 2.2 लाख लाभार्थियों के वार्षिक लक्ष्य के साथ इस योजना का ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तार किया जायेगा।

इस योजना के अंतर्गत 24,000 रुपये प्रति वर्ष से कम की आय वाले परिवारों के 18 और 35 वर्ष के बीच की उम्र के युवा सहायता पाने के पात्र हैं।

इसके तहत प्रत्येक उद्यमी को एक लाख रुपये तक का ऋण दिया जा सकता है। यदि दो या दो से अधिक उद्यमी मिलकर साझेदारी करते हैं तो अधिक लागत की परियोजना को इसमें सम्मिलित किया जा सकता है। इसमें शर्त यह रहेगी कि इस परियोजना में प्रत्येक व्यक्ति का हिस्सा एक लाख रुपये या उससे कम हो। इस योजना के अंतर्गत चुने गए उद्यमियों को 2000 रुपये तक का प्रशिक्षण और विकास सहायता उपलब्ध कराई जायेगी। मैट्रिक उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण छात्रों के अलावा, आई.टी.आई. प्रशिक्षित व्यक्ति और सरकार द्वारा प्रायोजित न्यूनतम छह माह की अवधि का तकनीकी पाठ्यक्रम पूरा किये हुए व्यक्ति इस योजना के अंतर्गत सहायता के लिए पात्र होंगे।

पूंजीगत सब्सिडी

सरकार परियोजना लागत की 15 प्रतिशत तक पूंजीगत सब्सिडी उपलब्ध करा रही है। इस सब्सिडी की सीमा 7500 रुपये प्रति लाभार्थी है। यह सब्सिडी लाभार्थियों को भारतीय रिजर्व बैंक के माध्यम से दी जाती है। प्रत्येक उद्यमी को परियोजना लागत के 5 प्रतिशत के बराबर राशि अतिरिक्त मार्जिन मनी के रूप में लगानी होगी। जिन लाभार्थियों को ऋण दिया जा चुका है, प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए 750 रुपये प्रति प्रशिक्षु प्रशिक्षण व्यय राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को वापस करना होगा। इसके अतिरिक्त परियोजना रूपरेखा तैयार करने, औद्योगिक क्षमता का सर्वेक्षण करने, बाजार सर्वेक्षण आदि के लिए एकमुश्त राशि राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों को जारी की जाती है।

ऋण अदायगी के लिए नियत समय, बैंक द्वारा निर्धारित 6 से 8 महीने के प्रारंभिक ऋण स्थगन काल को छोड़कर, 3 से 7 वर्ष के बीच होगा। राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों की सरकारों से इन उद्यमियों को आवश्यक बुनियादी सुविधाएं जैसे औद्योगिक स्थल, शेड, दुकान, पानी आदि की व्यवस्था को प्राथमिकता के आधार पर सुलभ कराने का आग्रह किया गया है। सेवा उपक्रमों के लिए शहरी क्षेत्रों में रियायती दरों पर स्थल और शेड की व्यवस्था आवश्यक होगी। अनेक राज्य और केन्द्र शासित क्षेत्रों की सरकारें अपनी औद्योगिक नीति के अंतर्गत जो विभिन्न कर रियायतें और सहायताएं उपलब्ध करा रही हैं, वे इस योजना के लाभार्थियों को

भी दी जानी चाहिए।

राज्य और संघ शासित प्रदेशों की सरकारों से प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत ऋण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को बिजली के कनेक्शन में प्राथमिकता देने तथा छोटी-छोटी बुनियादी सुविधाओं जैसे खम्भे लगाने के लिए कोई सुरक्षा निधि न मांगने और बिजली की लाइनों का विस्तार बिना विलम्ब के करने का भी आग्रह किया गया है।

निगरानी तंत्र

इसमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 22.5 प्रतिशत तथा अन्य पिछड़ी जातियों के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण होगा। महिलाओं एवं अन्य कमजोर वर्गों को भी प्राथमिकता दी जाएगी। इस योजना की एक विशेषता यह है कि इसमें कुछ गिरवी रखना आवश्यक नहीं है, केवल इस योजना के अंतर्गत निर्मित परिसंपत्तियां ही बैंक में रेहन रखी जायेंगी।

केन्द्र सरकार ने विभिन्न राज्यों और संघ प्रदेशों के लिए इस योजना के क्रियान्वयन के लिए लक्ष्य निर्धारित किए हैं। उन्हें किसी एक अभिकरण को जिला स्तर पर क्रियान्वयन अभिकरण के रूप में चुनने तथा जिलावार लक्ष्यों को निर्धारित करने के लिए भी कहा गया है। यह अभिकरण उस क्षेत्र के बैंकों की सलाह से स्व-रोजगार योजनाओं के प्रतिपादन, उन्हें लागू करने और उनकी निगरानी के लिए उत्तरदायी होगा। अभिकरण आवेदन प्राप्त करेगा और एक वरिष्ठ अधिकारी की अध्यक्षता में एक कार्यदल उन आवेदनों की जांच करेगा और बैंकों से उनकी अनुशंसा करेगा।

जिला, राज्य और केन्द्र के स्तर पर योजना की प्रभावशाली निगरानी के लिए एक तीन स्तरीय निगरानी तंत्र स्थापित किया गया है।

इस योजना ने युवाओं में उत्साह जागृत किया है। अभी तक, अब तक 30 हजार से अधिक युवाओं को ऋण मंजूर किये जा चुके हैं। शिक्षित बेरोजगार युवाओं से 2,20,000 आवेदन प्राप्त किए गए हैं। जिनमें से 82,678 उद्यमियों को ऋण देने के लिए बैंकों से सिफारिश की गई है।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

इंदिरा आवास योजना के अन्तर्गत 14 लाख से ज्यादा मकानों का निर्माण

इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत अब तक कुल 14 लाख 42 हजार मकान बनाये जा चुके हैं। पिछले चार वर्षों में इस पर 903 करोड़ 42 लाख रुपये खर्च किये जा चुके हैं।

गांवों में रहने वाले गरीबों की मकान की आवश्यकता को पूरा करने के लिए इंदिरा आवास योजना मई 1985 में शुरू की गई थी। यह योजना जवाहर रोजगार योजना की उपयोजना के रूप में चलायी जा रही है। केन्द्र सरकार 1994-95 में इस योजना पर 3 अरब 90 लाख रुपये खर्च करेगी। पिछले वित्तीय वर्ष में केन्द्र सरकार ने इसके लिए 2 अरब 54 करोड रुपये निर्धारित किये थे।

इस योजना के तहत बने मकान का आवंटन परिवार की महिला सदस्य के नाम पर किया जाता है। लाभार्थी अपनी जरूरत के अनुसार निर्माण के लिए अपना खुद का बन्दोबस्त कर सकते हैं।

भारत में मत्स्य उद्योग के विकास की संभावनाएं

डा. संजीव झा

मत्स्य पालन मनुष्य का आदिम व्यवसाय है। कृषि से पहले यह व्यवसाय प्रचलित था। मुख्य रूप से आर्कटिक जन-जातियों ने ही जलाशयों में मछली पकड़ने का व्यवसाय अपनाया। आज मत्स्य पालन व्यवसाय वाणिज्यिक स्तर तक पहुंच चुका है। अब विश्व के विकसित और विकासशील राष्ट्र इस व्यवसाय में संलग्न हैं। इसकी लोकप्रियता का प्रमुख कारण यह है कि पृथ्वी पर जनसंख्या के बढ़ते हुए भार के कारण वैज्ञानिक जलीय खाद्य संसाधनों की ओर आकृष्ट हुए हैं। मछली अन्य खाद्य पदार्थों की तुलना में ह्रासशील नहीं है। अतः यह विश्व की खाद्य समस्या को किसी सीमा तक सुलझाने में समर्थ है। विश्व उत्पादन की 97 प्रतिशत मछलियां उत्तरी गोलार्द्ध में पकड़ी जाती हैं। विश्व की अधिकांश जनसंख्या इसी गोलार्द्ध में निवास करती है।

भारत जैसे देश में जहां अनेक नदियां, नहरें, तालाब, झीलें और विस्तृत समुद्र तट हैं, मछलियां पकड़ने के लिए विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक और भौगोलिक अनुकूल दशाएं पाई जाती हैं। फिर भी मत्स्य व्यवसाय उन्नतशील नहीं है। भारत में प्रति व्यक्ति मछली की खपत मात्र 4 किलोग्राम है जबकि जापान में 115, कनाडा में 110, डेनमार्क में 65, ब्रिटेन में 50 तथा अमरीका में 40 किलोग्राम है। भारत में सभी स्रोतों से मछली का उत्पादन लगभग 26 लाख टन है। इस समय भारत की जनसंख्या वृद्धि दर 2.14 प्रतिशत वार्षिक है। इस तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या से उत्पन्न समस्या के समाधान हेतु मत्स्य जैसे व्यवसाय पर काफी बल देने की आवश्यकता है। सरकार ने विभिन्न योजनाओं में मत्स्य उद्योग के विकास के लिए धन-राशि उपलब्ध कराई है। कई लोगों को रोजगार मिला है तथा इससे खाद्य समस्या का हल ढूंढ़ा जा रहा है।

उद्योग का महत्व

मत्स्य उद्योग का महत्व वर्तमान काल में प्रशीतन की उपलब्धि से काफी बढ़ा है। इसके द्वारा इस उद्योग को व्यापारिक स्तर प्राप्त हुआ है। इसकी महत्ता निम्न प्रकार से है :

भोजन : मछलियां मानव का आहार हैं। नित्य प्रति आहार में जैविक प्रोटीन पदार्थों का होना आवश्यक है। मछली के आहार में लोहा, तांबा, आयोडीन, कैलशियम, मैग्नेशियम एवं फास्फोरस मुख्य खनिज सम्मिलित रहते हैं। ये सभी खनिज तत्व शारीरिक विकास के लिए आवश्यक हैं।

औषधियां : मछलियों से विभिन्न प्रकार की दवाईयां तैयार की जाती हैं। विटामिन 'ए' तथा 'डी' का व्यापक स्तर पर उत्पादन मछली के तेल से किया जाता है।

स्नेहक तेल : मछलियों के द्वारा स्नेहक तेल भी तैयार किया जाता है, जो विभिन्न प्रकार की मशीनों को चिकना रखने में काम आता है।

खाद : मछलियों को सुखाकर खाद तैयार की जाती है जो बहुत उर्वरक होती है।

अन्य उपयोग : मछली से जिलटीन तथा दांत प्राप्त होते हैं और मछली की खाल उत्तम चमड़ा बनाने में काम आती है। नये उपयोगों में से गायों तथा मुर्गियों को मछलियों का तेल खिलाना आधुनिक आविष्कार है, जिससे गायों की दूध तथा मुर्गियों की अंडे देने की क्षमता में वृद्धि देखी गई है।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि आज मछलियों का उपयोग केवल भोज्य पदार्थ के रूप में ही नहीं अपितु इससे आगे है। अतः इससे देश में पर्याप्त लोगों को रोजगार मिला हुआ है।

मछलियों के प्रकार

मछलियां दो प्रकार की होती हैं :

समुद्री मछलियां : इसके अंतर्गत साइडाइन, हेरिंग, सामन, ऐंकावी तथा शेड मछलियों का स्थान है। इसके बाद मैकरेल, पर्च, ज्यूफिश, कैट-फिश, ईल और दौराव आदि हैं।

ताजे जल की मछलियां : कुल पकड़ी जाने वाली मछलियों का एक तिहाई भाग इन मछलियों का ही होता है। इसके अंतर्गत रोहू, कतला, कालाबासू, सौर, मशीर, बचुआ, चिल्वा, बारिल, मुराल, मिंगन आदि मछलियां मुख्य हैं। इन मछलियों का उत्पादन नदियों, झीलों, तालाबों, बांधों और नहरों से प्राप्त किया जाता है।

उत्पादन और उपभोग

देश में मछली उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। 1951 में यह मात्र 7.5 लाख टन था जो कि 1986-87 में 31 लाख टन

और 1989-90 में लगभग 35 लाख टन हो गया। इसमें से 30 प्रतिशत अंतर्देशीय या मीठे जल की व शेष अपतटीय एवं खुले सागरों से प्राप्त की गयी। इसे बढ़ाकर 1995 तक 50 लाख टन प्राप्त करने का लक्ष्य है। समुद्री मछलियों के उत्पादन में मुख्य रूप से केरल, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल शामिल हैं।

मत्स्य उद्योग के पिछड़े होने के कारण

भारत में मछली पकड़ने में उद्योग का विकास न होने के निम्न कारण हैं :

(1) भारत में अधिकांश मछुआरे अशिक्षित एवं पिछड़े हुए हैं। मछली पकड़ने के ढंग पुराने हैं। घटिया जालों और छोटी-छोटी नावों से तटीय भागों में मछलियां पकड़ी जाती हैं।

(2) यातायात के शीघ्र साधन न होने से मारी गयी मछलियां शीघ्र ही बाजारों तक नहीं पहुंचायी जातीं। शीतगृहों की व्यवस्था न होने के कारण अधिकांश मछलियां सड़कर नष्ट हो जाती हैं।

(3) अधिकांश मछुआरे नवजात मछलियों को ही पकड़ लेते हैं। अतः भविष्य के लिए अधिक मछलियों की बड़ी किस्में नहीं पनप पाती हैं।

(4) भारत की नदियों और तालाबों, झीलों और निकटवर्ती सागरों में सैकड़ों किस्म की खाद्य मछलियां भरी हैं किंतु अभी तक इन साधनों का केवल 5-6 प्रतिशत ही उपयोग में लाया जा सका है। अशिक्षा, यातायात, मछली पकड़ने की अभिनव तकनीकें और सुविधाओ के अभाव के कारण इनका पूरा उपयोग नहीं किया जा सका है। इसलिए भारत में मछली पकड़ने के व्यवसाय में पूर्ण उन्नति नहीं हो सकी है।

सरकारी सहयोग तथा मत्स्य उद्योग का विकास

मछली पकड़ने के व्यवसाय को सुदृढ़ करने के लिए केंद्रीय और राज्य सरकारों द्वारा कई प्रयत्न किये गये हैं। भारत को मछली उत्पादन के क्षेत्र में हमें इंडो-यू. एस. ए. टेकनिकल मिशन प्रोग्राम, इंडो-नार्वेजियन फिशरीज़ कम्यूनिटी डवलपमेंट प्रोग्राम और खाद्य और कृषि संगठन के अंतर्गत सहायता मिल रही है।

मछुआरों को आधुनिक तरीकों से प्रशिक्षण देने के लिए सतपाटी (महाराष्ट्र), वेरावल (सौराष्ट्र) कोजन और तुतुकुण्डी (तमिलनाडु) में प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किये गये हैं। कलकत्ता में केंद्रीय मछली गवेषण केंद्र में नदियों और झीलों या तालाबों में अधिक मछली पैदा करना सिखाया जाता है।

मछलियों को सुरक्षित रखने के लिए महाराष्ट्र में मालवान, रत्नागिरि, बंबई, चौंदिया, पुणे और अकोला में, तमिलनाडु में मद्रास, तुतुकुण्डी, कुड्डलूर और भीलकराय में, केरल में कोजीखोड, कोचीन, क्विलोन और तिरूवन्तपुरम में बर्फ के कारखाने स्थापित किये गये हैं।

मछलियों के नये साधनों की खोज के लिए भारत सरकार ने बंबई में केन्द्रीय मत्स्य अनुसंधान शाला की स्थापना की। इसकी प्रमुख शाखाएं कलकत्ता, कटक और मद्रास में हैं, इनमें मछलियों की पैदावार बढ़ाने, अच्छी नस्ल की मछलियों को पालने तथा अन्य प्रकार के अनुसंधान किये जाते हैं।

मुछआरों की दशा सुधारने के लिए महाराष्ट्र, केरल, तमिलनाडु और उड़ीसा में लगभग 2,500 सहकारी समितियां स्थापित की गयी हैं।

भारत में 65 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में खारे पानी में मत्स्य पालन चल रहा है लेकिन इसमें 52 हजार हेक्टेयर में परंपरागत तरीके ही अपनाए जाते हैं। मद्रास में मछली विशेषज्ञों ने खारे पानी में झींगा पालने की तकनीक उन्नत कर ली है। झींगा मंहगा बिकता है और इसकी फसल 100-120 दिनों में तैयार हो जाती है। आंध्र प्रदेश में 6000 हेक्टेयर से अधिक खारे पानी के तालों मे झींगा पाला जा रहा है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य उद्योग का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में प्रतिवर्ष 650 से 700 करोड़ मूल्य के मत्स्य विदेशों में भेजकर विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है।

भारत से समुद्री उत्पाद का निर्यात 1989-90 में 687.18 करोड़ रुपये, 1990-91 में 960.01 करोड़ रुपये तथा 1991-92 में 1,373.96 करोड़ रुपये का किया गया।

1992-93 में निर्यातकों को 1767.43 करोड़ रुपये तक पहुंचाकर रिकार्ड वृद्धि की गई है।

सुझाव

(1) ध्वनि विस्तार यंत्रों (इकोसाउन्ड) के द्वारा मत्स्य क्षेत्र ज्ञात किये जाने चाहिये अथवा खाद्योपयोगी अन्य जल-जीवों का पता लगाया जाना चाहिये।

(2) मछलियों की नवीन जातियों के विषय में जानकारी प्राप्त की जाए और उनका क्या उपयोग हो सकता है।

- मत्स्य क्षेत्रों मे मछलियां नवीन विधियों द्वारा पकड़ने की व्यवस्था की जानी चाहिये।
- गंगा-डेल्टा के दलदली भागों में मछली व्यवसाय के लिए विशेष सुविधा उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
- अवलणीय जल की मछली को विशेष प्रोत्साहन मिले जिससे अत्यधिक जनसंख्या को लाभ मिले।
- देश के जलाशयों, तालाबों, झीलों में मत्स्य पालन को आधुनिक तरीकों से विकसित किया जाये।
- ग्राम-अंचल पर इसके प्रशिक्षण की विशेष रूप से व्यवस्था की जाये।
- खेती के साथ किसानों को मछली पालन के लिए विशेष प्रोत्साहन मिले। तदुपरांत ही मत्स्य उद्योग विकसित होगा और हमारा भारत आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होगा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में गहन समुद्री मात्स्यिकी क्षेत्र में प्रस्तावों का अनुमोदन किया गया है। इस परियोजना के र्गत तूना और कुछ अन्य मछलियों का भी निर्यात किया एगा। अनुमोदन प्रस्तावों के फलस्वरूप 113 बड़े गहन समुद्री स्यिकी जलाशयों की अभिवृद्धि होगी। इनमें से 6 उद्यमों ने 92 के अंत तक 7 बड़े जलाशयों द्वारा काम पहले ही शुरू कर दिया है। मात्स्यिकी क्षेत्र में 23 संयुक्त उद्यम प्रस्तावों में लगभग 60 लाख अमरीकी डालर का विदेशी निवेश निहित है। वर्ष 1992-93 के दौरान मछली प्रसंस्करण और विपणन के लिए शत-प्रतिशत निर्यातोन्मुखी इकाइयां लगाने के लिए 36 प्रस्ताव स्वीकृत किए गए है। इनमें सात प्रस्ताव विदेशी इक्विटी भागीदारी वाले हैं। इस परियोजना में करीब एक करोड़ 20 लाख अमरीकी डालर के विदेशी निवेश होने का अनुमान है। निर्यात की प्रक्रिया में भी गति आई है।

उद्योग के विकास के लिए खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय ने इस योजना में अनेक कार्यक्रम शुरू किये हैं। इनमें शीतगृहों और प्राथमिक प्रसंस्करण सुविधाओं जैसे मूल संरचनात्मक विकास, बाजार सुविधाएं, कार्मिकों के प्रशिक्षण तथा नए क्षेत्रों में प्रसंस्करण सुविधाओं का विस्तार सम्मिलित है।

इसके साथ ही उपभोक्ताओं को भी विश्व स्तर के बढ़िया उत्पाद स्पर्धात्मक मूल्यों पर मिलेंगे, उद्योगों में हजारों लोगों को रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे तथा निर्यात से देश की बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होगी। गांवों में भी प्रगति तथा आत्मनिर्भरता से देश की गरीबी को उभारा जा सकता है।

द्वारा श्री के. एन. झा,
मेसर्स किसान सेवा केन्द्र, एक्जीबिशन रोड,
पटना - 800001 (बिहार)

ष्ठ 6 का शेष)

शेषकर वर्षा ऋतु में, लघु और कुटीर उद्योगों के उत्पादों का भाव हो जाता है जिससे कई नई समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। रिणामतः मजदूर काम छोड़ कर शहरों की ओर पलायन करने ाते हैं और उद्योग बन्द होने की स्थिति में आ जाते हैं। व्यापारिक कों के ऋण नहीं चुका पाने के कारण ब्याज बढ़ता जाता है। ससे उद्यमियों का उत्साह भी कम हो जाता है। अतः ग्रामीण र्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए यातायात की मुचित व्यवस्था के साथ-साथ सम्बद्ध सभी समस्याओं को थमिकता दी जानी चाहिए। शोध संस्थानों, स्वयंसेवी संस्थाओं, श्वविद्यालयों को ग्रामीण क्षेत्रों में आकर काम करना चाहिए, भी गांवों का सर्वांगीण विकास संभव होगा।

इस प्रकार भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए लघु और कुटीर उद्योग वह मूल मंत्र है जिसके माध्यम से ग्रामीण गरीबों की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दशा को सुधारा जा सकता है। लोगों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाया जा सकता है। कृषि पर से जनसंख्या का दबाव रोका जा सकता है। पलायन पर अंकुश लगाया जा सकता है। अंततः जापान की तरह सर्वांगीण विकास की अवस्था में पहुंचा जा सकता है। यह समय की मांग है तथा इसी में भारत वर्ष का कल्याण है।

ग्राम-पो०– पसौर,
जिला भोजपुर,
पिन–802213 (बिहार)

मत्स्य उत्पादन एवं पर्यावरण

डा० ए० पी० राव
मत्स्य विज्ञान विभाग
न० दे० कृ० एवं प्रौ० विश्वविद्यालय
कुमारगंज, फैजाबाद

पृथ्वी पर बढ़ती अपार जनसंख्या और इसके भरण-पोषण के लिये भोजन का उत्पादन तीव्र गति से बढ़ रहे पिशाची उद्योग तथा यातायात के साधन पृथ्वी और वायुमंडल के पर्यावरण को अत्यधिक प्रदूषित करते जा रहे हैं। मानव के आविष्कारों के परिणामस्वरूप जनित प्रदूषण की विकराल यातनाओं को सहन करने की पृथ्वी की जितनी क्षमता है शायद उसे भी पृथ्वी पार कर चुकी है। 30 मई 1992 को प्रकाशित दैनिक "स्टैट्समैन" में जान हापकिन्स के अनुसार विश्व की 550 करोड़ जनसंख्या का प्रबलतम भार पृथ्वी की सहनशक्ति से अधिक है। इस कारण वातावरण नाना प्रकार की विकृतियों के बोझ से पूर्णतया प्रदूषित हो चुका है।

जल एक अद्वितीय प्राकृतिक सम्पदा है, जो मानव जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। प्रकृति में जल की एक निश्चित मात्रा है इसे न तो घटाया जा सकता है और न ही कभी बढ़ाया जा सकता है किंतु मानवीय क्रिया कलापों के परिणामस्वरूप यह प्रदूषित हो सकता है। जैसा हम सभी जानते हैं कि कुल उपस्थित जल का 97 प्रतिशत भाग खारे पानी के रूप में समुद्रों में तथा 3 प्रतिशत भाग मीठे जल के रूप से पृथ्वी पर तथा पृथ्वी के नीचे उपस्थित है। इस तीन प्रतिशत जल का एक प्रतिशत भाग ही कृषि, उद्योग तथा घरेलू कार्यों में उपयोग होता है। यह खेद का विषय है कि मानव के लिए उपलब्ध इतने कम जल का उपयोग भी समुचित ढंग से नहीं हो पा रहा है और प्रतिदिन यह प्रदूषित होता जा रहा है।

मानव के शारीरिक एवं मानसिक विकास में प्रोटीन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। आज समाज के सभी वर्गों के लोग भोजन में प्रोटीन की महत्ता को समझने लगे हैं और प्रोटीन बाहुल्य पदार्थों का सेवन अधिक से अधिक मात्रा में करना चाहते हैं। यह सर्वविदित है कि मछली प्रोटीन का अति उत्तम स्रोत है। इसलिए विश्व में इसकी मांग प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। परंतु मांग की अपेक्षा उत्पादन दिनों दिन घटता जा रहा है। खाद्य एवं कृषि संगठन की एक विज्ञप्ति के अनुसार इस शताब्दी के अंत तक मांग और पूर्ति के बीच लगभग 200 लाख टन मछली की कमी की आशंका है।

राष्ट्रकुल देशों में मछली उत्पादन की दृष्टि से भारत का आठवां स्थान है। भारत में मत्स्य उत्पादन के लिये उपलब्ध जल स्रोत समुद्र, नदी, नाले, झीलें आदि बहुत अधिक प्रदूषित हो चुके हैं और दिन प्रतिदिन इनमें प्रदूषण बढ़ता ही जा रहा है। इस प्रकार मत्स्य उत्पादन की बढ़ोत्तरी संबंधी विषय के समक्ष एक प्रश्न चिन्ह लग गया है।

देश में 1,64,121 कि० मी० लंबी नदियां व नहरें तथा 19.73 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में झील और जलाशय है। नदियों में 14 बड़ी, 44 मध्यम तथा अनेक छोटी है। वैज्ञानिकों का मानना है कि इनका 70 प्रतिशत जल प्रदूषित हो चुका है। इन नदियों में लगभग 1645 घन कि० मी० जल प्रतिवर्ष प्रवाहित होता है। आश्चर्य की बात है कि देश की लगभग सभी नदियां आज प्रदूषण की चपेट में हैं। अकेले गंगा के 2500 कि० मी० लंबे रास्ते में ही 19.79 लाख कि० ग्रा० कचरा प्रतिदिन डालकर इसके प्रदूषण स्तर को दिन प्रतिदिन बढ़ाया जा रहा है। देश की सभी नदियों के साथ करोड़ों टन गंदगी प्रतिवर्ष समुद्रों में पहुंचती है जिससे उनका प्रदूषण स्तर भी निरंतर बढ़ रहा है। इससे मत्स्य उत्पादन कम होता जा रहा है। मछली की बढ़ती मांग की पूर्ति करने के लिए इन जलक्षेत्रों को प्रदूषण मुक्त करके मत्स्य उत्पादन को बढ़ाना होगा। देश के बड़े शहरों के मल-जल का मछली उत्पादन के लिये उपयोग कर इससे उत्पन्न जल प्रदूषण को काफी कम किया जा सकता है।

देश में 22.12 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में तालाब एवं पोखरे हैं जिनका गांवों में बर्तन साफ करने, पशुओं को नहलाने एवं छोटी-मोटी सिंचाई आदि करने के लिए प्रयोग होता है। इन तालाबों से मात्र तीन-चार क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष मछली

प्त होती है जो बहुत ही कम है। प्रायः गांवों के समीप तालाब था तालाबों के समीप गांव होते हैं। अब प्रदूषण के कारण इस तालाबों का उपयोग उतना नहीं है जितना लगभग 50 वर्ष था ससे पूर्व था। परंतु अब भी इनकी उपयोगिता को झुठलाया नहीं जा सकता। दो तीन दशक पूर्व इन तालाबों व पोखरों में प्रकृति रपूर मात्रा में मछलियां ग्रामीणों को उपहार स्वरूप प्रदान करती थी। परंतु मल-मूत्र व व्यर्थ पदार्थों द्वारा अधिक प्रदूषण व मानव क्रियाओं ने इन्हें इस हद तक प्रभावित किया कि अब मछलियों की संख्या नगण्य है। हमारे गांवों में मल-मूत्र विसर्जन का अपना पुराना तरीका है, उसके बारे में हमें गंभीरता से सोचना है। हमारे देश में गांधी जी ने लोगों का ध्यान इस ओर खींचा था जिसकी प्रेरणा से प्रेरित होकर सुलभ शौचालय तैयार किये गये हैं। इन तालाबों व पोखरों को बचाने के लिए हमें गांधी जी के बताये रास्तों को अपनाना होगा। इन जल क्षेत्रों में कुछ वर्षों से पारम्परिक विधियों द्वारा मछली पालकर उत्पादन प्रति हेक्टेयर एक से डेढ़ टन प्रतिवर्ष तक प्राप्त किया जा रहा है। परंतु अब नई-नई वैज्ञानिक विधियों का उपयोग कर इन जलक्षेत्रों की उत्पादकता 10 से 15 गुना बढ़ाई जा सकती है। अति सघन औद्योगिक मत्स्य पालन जो मछली पालन की सबसे नई विधि है जिसमें उत्पादन प्रति हेक्टेयर 100 टन से भी अधिक लिया जा सकता है। यह विधि पूर्ण रूप से जल परिवर्तन, कृत्रिम भोजन, हारमोन्स, आक्सीजन प्रवाह आदि पर निर्भर होती है।

जल में नाना प्रकार के घातक पदार्थ मिश्रित होते हैं। इनमें घरेलू मल-जल, विषाक्त कार्बनिक व अकार्बनिक पदार्थ, पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन, रेडियोधर्मी पदार्थ आदि प्रमुख हैं। प्राकृतिक जल में काफी मात्रा में घरेलू मल-जल प्रवाहित किया जाता है। यद्यपि यह बहुत अधिक विषैला नहीं होता परंतु जल जीवों तथा जल की प्रकृति को कई प्रकार से प्रभावित करता है। मल-जल में कुछ ऐसे जीवाणु होते हैं जो जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों का विघटन करते हैं। इस विघटन में काफी मात्रा में घुलित आक्सीजन का उपभोग होता है जिससे जल में आक्सीजन का संतुलन बिगड़ जाता है। इसके फलस्वरूप जल में विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं और मत्स्य उत्पादन प्रभावित होता है।

संश्लेषित कीटनाशक जैसे डी. डी. टी., पी. सी. सी. तथा अन्य क्लोरिनैटेड यौगिक पी. सी. बी., क्लोरोफिनाल आदि बहुतायत में किसी न किसी कार्यक्रम में प्रयुक्त होते हैं। जल में इनकी अधिक उपस्थिति मछलियों के लिए सीधी घातक होती है।

पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन के निम्न स्तर का प्रदूषण यद्यपि मछलियां सहन कर लेती है परंतु धीरे-धीरे इसके प्रभाव से मछलियों का ऊतक विकृत हो जाता है और यह खाने योग्य नहीं रह जाता।

पर्यावरण के सुधार में मत्स्य उत्पादन का सराहनीय योगदान है। मछलियां मच्छरों के लार्वा तथा सूतकृमि का भक्षण कर उन्हें समाप्त कर पर्यावरण सुधार में अपना योगदान देती हैं। यह सर्वविदित है कि घरेलू मल-जल का प्रदूषण बढ़ाने में महत्वपूर्ण स्थान है। प्रायः मल-जल में पोषक तत्वों की अधिक मात्रा तथा नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम भी प्रचुर मात्रा में उपस्थित होते हैं। उपस्थित कार्बनिक पदार्थों में 40-50 प्रतिशत भाग प्रोटीन तथा शेष भाग में कार्बोहाइड्रेट होता है। इसके अतिरिक्त इसमें विभिन्न प्रकार के रोगकारक व अरोगकारक जीवाणु उपस्थित होते हैं। अब तक भारत में केवल कलकत्ता शहर के ही मल-जल का उपयोग मत्स्य उत्पादन में किया जा रहा है। यहां मल-जल को तालाबों में एकत्रित कर दो-तीन दिन के लिये छोड़ दिया जाता है। जिससे ठोस पदार्थ नीचे बैठ जाता है। तदोपरांत इनमें मछलियों का संचय कर उत्पादन लिया जाता है। परंतु अब मल-जल में मछली उत्पादन की नई तकनीकी का विकास कर लिया गया है। इसमें पहले मल-जल को उपचारित किया जाता है जिससे उसमें उपस्थित हानिकारक पदार्थों का निस्तारण हो सके। कलकत्ता में मल-जल पोषित मत्स्य पालन से प्रति हेक्टेयर 5-10 टन प्रतिवर्ष उत्पादन लिया जा रहा है। इसके अतिरिक्त जल से काफी मात्रा में शाक सब्जियां भी उगाई जा रही हैं। इस प्रकार मल-जल का सदुपयोग कर जल प्रदूषण को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

अभी तक मत्स्य उत्पादन का प्रभाव प्राकृतिक जल सम्पदा पर क्या पड़ रहा है इस विषय पर बहुत कम अध्ययन हुआ है, परंतु इसके होने वाले कुप्रभावों को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। मत्स्य उत्पादन के लिए देश में बड़ी परियोजनाओं का पदार्पण हो रहा है जैसे उड़ीसा के चिलका झील में टाटा द्वारा झींगा उत्पादन थापर ग्रुप, सहारा ग्रुप आदि कंपनियां भी बड़ी परियोजनाओं द्वारा इस क्षेत्र में प्रवेश कर रही हैं। उपरोक्त कंपनियां बड़े पैमाने पर प्राकृतिक जल संपदा अथवा जल प्लावित क्षेत्रों को अपने अनुसार परिवर्तित कर उनका दोहन करेंगी जिससे

(शेष पृष्ठ 20 पर)

महिला समृद्धि योजना

राज्य की सीमाओं को तोड़कर ग्रामीण भारत के एक लाख बत्तीस हजार से भी अधिक डाकघरों में एक नई हलचल-सी आ गई है। निचले स्तर पर बैंकिंग इकाइयों की भूमिका निभाते हुए ये डाकघर महिला समृद्धि योजना की बचत योजना को लोकप्रिय बनाने में प्रयासरत हैं। इस योजना पर बड़ी जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई है। इसकी शुरुआत के पहले ही सप्ताह में 37,547 खातों में 27 लाख 40 हजार रुपये की राशि जमा की गई। 31 मार्च, 1994 तक खुले सात लाख, 29 हजार खातों में 9 करोड़ रुपये की राशि जमा की गई।

इस संबंध में आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान और हरियाणा में काफी अच्छा काम किया गया। केवल जनवरी में ही इन राज्यों में महिला समृद्धि योजना के अंतर्गत क्रमशः 52 लाख, 19 लाख, 18 लाख, 14 लाख, 14 लाख और 13 लाख रुपये की राशि जमा की गई।

सरकार ने इस योजना को हर गांव में सफल बनाने के लिए कई स्तरों पर काम शुरू किया है। क्षेत्रीय स्तर पर कार्यरत डाक कर्मचारियों को सचेत करने के लिए उन्हें विशेष प्रशिक्षण दिया जा रहा है। लगभग इकतीस हजार डाक कर्मियों को अब तक प्रशिक्षित किया जा चुका है। इस योजना के संचालन के लिए डाक विभाग को दस करोड़ रुपये की राशि उपलब्ध कराई गई है। घर-घर में महिला समृद्धि योजना की जानकारी पहुंचाने के लिए वीडियो स्पाट्स, लघु फिल्मों, फोल्डरों, पोस्टरों, डाक की स्टेशनरी पर संदेशों, भित्ति चित्रों, समाचार पत्रों, बस पैनेलों के जरिए इस योजना का प्रचार करने के लिए पचास लाख रुपये की अतिरिक्त राशि निर्धारित की गई है।

सारी कवायद का उद्देश्य है महिलाओं के प्रति भेदभाव समाप्त करना। योजना के अंतर्गत हर एक वयस्क महिला को कम से कम चार रुपये से खाता खोलने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसके आगे जमा की जाने वाली राशि भी चार रुपये के गुणज में स्वीकार की जाती है। राशि को खाते में एक वर्ष [illegible] जमा रखना होगा जिसमें सरकार पच्चीस प्रतिशत का अंश[illegible] देगी। एक वर्ष में सरकार अधिकतम 75 रुपये अंशदान दे[illegible] खाताधारी एक कैलेंडर वर्ष में खाते से दो बार धन निकाल सक[illegible] है।

योजना का संचालन बेहद सरल है। महिला समृद्धि योज[illegible] के अंतर्गत खाता खोलने की इच्छुक महिला अपने गांव के स[illegible] नजदीकी डाकघर से संपर्क कर सकती है। महिला जमाकर्ता अ[illegible] आयु और निवास स्थान को प्रमाणित करके खाता खुलवा सक[illegible] है और उसमें अपनी सुविधानुसार चार रुपये के गुणज में कि[illegible] में धन जमा कर सकती है। पहली बार धन जमा करने के [illegible] दिन खाता खोल दिया जाता है और शीघ्र ही एक पास बुक ज[illegible] कर दी जाती है।

इसके अलावा, इस योजना के अंतर्गत खाता खोलने के [illegible] किसी अन्य योजना के अंतर्गत खाता खोलने पर भी पाबंदी [illegible] है। जमाकर्ता महिला आवश्यकतावश महीने की अवधि पूरी [illegible] से पहले ही कुछ धनराशि निकाल सकती है। ऐसी स्थिति में [illegible] डाकघर में शेष राशि पर बारह प्रतिशत वार्षिक की दर से प्रोत्सा[illegible] राशि दी जाएगी। इसके लिए भी उसे राशि को कम से कम [illegible] दिन तक खाते में जमा रखा होगा। बचत की आदत से महिल[illegible] जरूरत के वक्त अपने आपको सुरक्षित महसूस कर सकती [illegible]

राष्ट्रीय स्तर पर योजना पर नजर रखने के लिए, योज[illegible] आयोग में एक निगरानी दल का गठन किया गया है जिसमें महि[illegible] और बाल विकास विभाग के प्रतिनिधि भी शामिल हैं। रा[illegible] मंडलीय और जिला स्तर पर समीक्षा समितियां गठित की जा [illegible] हैं। सभी स्तरों पर गैर-सरकारी संगठनों की भागीदारी भी ली [illegible] रही है। इससे कार्यक्रम के सफल होने में मदद मिलेगी।

साभारः पत्र सूचना कार्या[illegible]

ग्रामीणों का शहर की ओर पलायन : एक समस्या

✍ राजेन्द्र यादव "सुलभ"

गांव से शहर की ओर ग्रामीणजनों का पलायन करना शहरवासियों के लिए समस्या है, तो ग्रामीण जनों के लिए मजबूरी है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्य आज भी अधिकांश क्षेत्रों में मानसून की वर्षा पर आधारित है क्योंकि आज भी भारत के अनेक गांव जल संसाधन सुविधाओं से रहित हैं। भारत के कृषि उत्पादन के संबंध में कहा भी जाता है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है किन्तु भारत में कृषि कार्य एक जुआ है क्योंकि कृषि कार्य का 60 प्रतिशत भाग आज भी मानसून की वर्षा पर आधारित है। ग्रामीण कृषक मजदूरों को उनके गांवों में मानसून के समय जुलाई से अक्तूबर तक केवल चार माह तक ही कृषि संबंधी रोजगार उपलब्ध हो पाता है। वर्ष के बाकी आठ महीने तो वे बेकार रहें या फिर मजबूरन रोजगार की तलाश में गांव से शहर की ओर पलायन करें। ग्रामीण कृषक मजदूरों का गांव से शहर की ओर पलायन करना जहां उनकी मजबूरी होती है वहीं उनके पलायन से शहरों में आकर बसने से शहर की आबादी आकस्मिक ढंग से बढ़ जाती है, शहर के सार्वजनिक स्थल इनके आगमन से खचाखच भर जाते हैं और इनके रहन-सहन के निम्न स्तर के कारण शहर की सफाई व्यवस्था भी प्रभावित हो जाती है।

वास्तव में ग्रामीणों का गांव छोड़कर शहर की ओर रोजगार की तलाश में पलायन करना एक विकट समस्या है। इस समस्या पर केन्द्र सरकार, राज्य सरकार एवं जिला प्रशासन के प्रमुख अधिकारियों को विचार करना पड़ेगा कि किस प्रकार से इन ग्रामीणों के पलायन को रोका जाये जिससे न गांव वीरान हो न ही उनके पलायन से शहर की समस्याओं में वृद्धि हो। वैसे ग्रामीणों को उनके गांवों में ही वर्ष भर रोजगार मुहैया कराने हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा कई कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिनमें अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जा रहे हैं, जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन. आर. ई. पी.) और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (आर. एल. ई. जी. पी.)। आवश्यकता इस बात की है कि शासन द्वारा चलाये जा रहे उपरोक्त ग्रामोन्मुख रोजगार कार्यक्रमों को जिला अधिकारियों एवं निचले स्तर के अधिकारी ईमानदारी के साथ क्रियान्वित करें, साथ ही शासन ग्रामीण कुटीर उद्योग को प्रोत्साहित करें ताकि ग्रामीण जनों को अपना गांव छोड़कर शहर की ओर पलायन करने हेतु मजबूर न होना पड़े।

मकान नं. 32,
महन्त मार्ग, किलावार्ड,
बिलासपुर (म.प्र.)

(पृष्ठ 2 का शेष)

'कुरुक्षेत्र' का ज्ञानवर्द्धक फरवरी अंक पढ़ा। आलेखों के अध्ययन से लगा कि भारतीय गांव गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता एवं जनसंख्या वृद्धि जैसे अनेक घातक समस्याओं से ग्रस्त हैं और इनके सभी आयामों को समाधानार्थ उजागर किया गया है। स्वतंत्रता के 46 वर्षों के पश्चात भी हमारे देश में 28 करोड़ लोग निरक्षर हैं। निरक्षरता की दर में वृद्धि के साथ-साथ गरीबी और बेरोजगारी भी बेहद बढ़ चुकी है। ऐसे में सुन्दर लाल कुकरेजा का "गरीबी को जड़ों से उखाड़ना होगा", ओम प्रकाश दत्त का "ग्रामीण गरीबी : सार्थक समाधान", डा० पुष्पा अग्रवाल का "गांव की गरीबी दूर करने में कुटीर उद्योगों की भूमिका" के अतिरिक्त अन्य लेखकगण भी बधाई के पात्र हैं।

गांवों को आत्मनिर्भर बनाकर ही गांवों से शहरों की ओर पलायन पर अंकुश लगाया जा सकता है। शान्ति, प्रेम, आपसी सहयोग, विश्वास एवं भाईचारे का वातावरण तैयार करने के लिए कुटीर उद्योगों को अपनाना होगा तथा परिवार नियोजन कार्यक्रम को पूरे मन से लागू करना होगा। हरित क्रान्ति के साथ-साथ श्वेत क्रांति और नील क्रांति लानी होगी। गांवों के समेकित विकास के लिए आम लोगों में नई जागृति पैदा करने की जरूरत है। "उठ जाग मुसाफिर भोर भई।"

सुनील कुमार एवं सुशील कुमार
द्वारा-डा० रामविनोद सिंह
अशोक नगर, गया (बिहार)

ग्रामीण बेरोजगारी : स्वरूप और निदान

✍ डा० राम राव भोंसले
डिप्टी कलक्टर, म. प्र. शासन

भारत की प्रमुख समस्याओं में बेरोजगारी एक गम्भीर समस्या है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार 64 करोड़ से ज्यादा लोग, जो कि कुल जनसंख्या का लगभग 74 प्रतिशत हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं इसलिए भारत को गांवों का देश भी कहा जाता है। हमारे ग्रामीण क्षेत्र मुख्यतः कृषि पर निर्भर हैं। कृषि प्रधान देश होते हुए भी लगभग 75 प्रतिशत ग्रामीण आबादी पुराने ढंग की खेती से जुड़ी हुई है। आधुनिक युग में गांव की हस्तकलाएं दम तोड़ती नजर आ रही हैं। रोजगार चाहने वालों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि होने से न केवल ग्रामीण क्षेत्र बल्कि शहरी क्षेत्र के नवयुवाओं में रोजगार न मिल पाने से मानसिक कुण्ठाएं एवं असुरक्षा की भावना पैदा हो रही है।

ग्रामीण क्षेत्र में विशेषकर कृषि ही सबसे बड़ा रोजगार का क्षेत्र होती है, जिसमें पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से लोग कार्यरत रहते हैं। कृषि क्षेत्र में विकास के अवसर सीमित होने से, वहां रोजगार की समस्या गंभीर रूप धारण कर रही है, इसलिए वहां पढ़े-लिखे एवं बिना पढ़े-लिखे दोनों तरह के लोग रोजगार की तलाश में शहरी क्षेत्र में जाने का प्रयास कर रहे हैं। नई पीढ़ी पर फैलते इस असंतोष का नाजायज फायदा असामाजिक तत्वों और साम्प्रदायिक शक्तियों द्वारा अक्सर उठाया जाता है। इससे देश की सांस्कृतिक एवं समग्र प्रगति को भी धक्का लगता है। इन नुकसानों को दूर रखने एवं सन्तुलित विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये यह बहुत ही जरूरी है कि हम रोजगार के अवसरों के सृजन को प्राथमिकता दें।

ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों का पलायन तभी रुक सकता है जब हम लोगों को उन्हीं के क्षेत्र में रोजगार के अवसर मुहैया करा सकें। रोजगार के लिये साधन उपलब्ध कराने के क्षेत्र में हमारे सामने दो विकल्प हैं– प्रथम लोगों को कोई ऐसी तकनीकी या वित्तीय सहायता दी जाए जिससे वे आत्म-निर्भर होकर स्वयं कोई घरेलू उद्योग या काम धन्धा शुरू कर सकें। द्वितीय विभिन्न शासकीय योजनाएं, जो कि मजदूरी पर आधारित हैं, क्रियान्वित कर दैनिक रोजगार प्रदान किया जाए।

प्रथम विकल्प के अन्तर्गत हमारे पास एक विशाल क्षेत्र मौजूद है। इसमें हम जिन क्षेत्रों व व्यवसायों को विकसित कर सकते हैं उन पर गौर करते हैं। कृषि एक ऐसा क्षेत्र है जो कई क्षेत्रों का पूरक है। पशुपालन जहां शत प्रतिशत कृषि पर आश्रित है वहीं कुटीर और लघु उद्योग को लगभग 90 प्रतिशत कच्चा माल कृषि ही देती है। इसलिये कृषि को बढ़ावा देना लाभप्रद होगा। अधिक लाभ एवं रोजगार पाने के लिये नगदी खेती पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, जैसे कपास, गन्ना, तिलहन, दलहन, सोयाबीन, फल एवं सब्जियां आदि। कम क्षेत्रफल, कम मेहनत व थोड़ी पूंजी से नारियल, केला, पपीता, अंगूर, नीबू, आम, अंगूर आदि की बागवानी से रोजगार एवं अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

बागवानी के अलावा पशुपालन में डेरी फार्म, कुक्कुट केन्द्र, रेशम के कीड़े पालना आदि भी उपयोगी हैं। आजकल दूध व दूध से बने पदार्थों को तैयार करना और विक्रय करना एक लाभदायक रोजगार बन गया है। मत्स्य पालन ग्रामवासियों के लिये एक लाभदायक रोजगार बन सकता है इसमें मछली पालने के साथ-साथ तालाब की मुंडेर पर बागवानी एवं सब्जी की खेती भी की जा सकती है।

प्राथमिक क्षेत्र के अतिरिक्त गांवों में कम पूंजी व सरल तकनीक पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों को भी अच्छा फैलाव देकर नवीन रोजगार लोगों को उपलब्ध कराया जा सकता है। गांव के वातावरण एवं पुराने समय से चले आ रहे किसी विशेष हस्तशिल्प को पहचान कर उसे उद्योग के रूप में विकसित किया जा सकता है। ऐसे छोटे-छोटे कई घरेलू उद्योग हैं जिन्हें एक ही परिवार के सदस्यों द्वारा चालू किया जा सकता है जैसे-जूट का सामान, रस्सी बुनाई, केन व लकड़ी के फर्नीचर, हथकरघा, लोहे का सामान जो मकानों आदि में लगता है, आटे व मसाले की चक्की, पापड़ बनाना, छाता व जूता निर्माण, हस्तशिल्प से सम्बन्धित खिलौने और कलात्मक वस्तुएं बनाना, प्लास्टिक के सामान के छोटे उद्योग आदि। इनमें कई अन्य उद्योगों को शामिल किया जा सकता है परन्तु जरूरत है कि प्रत्येक गांव की व उसके निवासियों की पृष्ठ-भूमि, रहन-सहन, जलवायु, आस-पास उपलब्ध बाजार एवं संभावनाओं को समझा जाये एवं उपयुक्त घरेलू उद्योग हेतु पर्याप्त सहायता व मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाये।

हमारा द्वितीय विकल्प, सरकारी योजनाओं द्वारा मजदूरी एवं रोजगार प्रदान करना, ऐसा विकल्प है जो विगत कुछ समय से अच्छे परिणाम देने वाला साबित हो रहा है। जवाहर रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना एवं अन्य ग्रामीण विकास योजनाओं के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में जनोपयोगी निर्माण कार्यों को

प्रारंभ किया जाता है तथा आस-पास के ग्रामीण जन को मजदूरी के रूप में रोजगार प्रदान किया जाता है। इससे जहां एक ओर समाज को कोई सामुदायिक परिसम्पति प्राप्त होती है वहां दूसरी ओर लोगों को रोजगार मिलता है।

इन विभिन्न सरकारी योजनाओं को ऐसे समय पर प्रारंभ करना जरूरी है, जबकि कृषि पर पूर्ण व आंशिक रूप से निर्भर लोगों के पास कोई कृषि कार्य न हो, क्योंकि अक्सर ऐसे ही समय पर जनसंख्या का पलायन होता है।

वर्तमान में सरकार उक्त दोनों विकल्पों के अन्तर्गत प्रयास कर रही है। इससे एक सीमा तक रोजगार के नवीन अवसर सृजित किये जा सके हैं, परन्तु तेजी से काम मांगते हाथों के लिए इन प्रयासों में कुछ अन्य प्रयास जोड़े जाने की बहुत जरूरत है। जैसे– प्रत्येक ग्रामीण अंचल की पृथक-पृथक विशेषताएं होती हैं, वहां के निवासियों की योग्यताएं और उपलब्ध संसाधन भी भिन्न-भिन्न होते हैं। अतः एक ही प्रकार की सरकारी योजना या विकास नीति हरेक क्षेत्र के लिये उतनी ही उपयोगी साबित हो, ऐसी उम्मीद नहीं की जानी चाहिए। इसके लिए जरूरी है राज्य स्तर पर एक ऐसी अनुसंधान व विकास एजेन्सी हो जो सर्वेक्षण व अध्ययन आदि के द्वारा न केवल क्षेत्र विशेष के लिये उपयोगी उद्योग धंधों एवं कार्यक्रमों को सुझाये बल्कि रोजगार से जुड़े नये परिवर्तनों एवं संभावनाओं के बारे में लोगों में चेतना, प्रशिक्षण, मार्गदर्शन आदि भी दे सके। एक ऐसी संस्था जो ग्रामीणों की पहुंच के भीतर हो और जो नये उद्योगों और नये रोजगार के विषय में सरलता व सहजता से मार्गदर्शन दे सके। इन प्रयासों के चलते निश्चय ही हम ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या के निदान तक पहुंच सकते हैं।

परियोजना अधिकारी,
ग्रामीण विकास अभिकरण,
रतलाम (म०प्र०)

लघु कथा

विडम्बना

आलोक 'चन्द्र'

बदरू दर्जी ने प्रथम बार अपने पुत्र को दुकान पर बैठाने से पूर्व उसे धन्धे के गुर बताते हुए कहा, "बेटा, ग्राहक हमारे भगवान हैं उनसे कभी बहस न करना. . . ., एक बात गांठ बांध लो कि ग्राहकों की शिकायत सुनकर कभी तैश में न आना, बल्कि उसे एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देना, तभी तुम सफल होओगे। आज्ञाकारी पुत्र ने पिता की सारी बातें ध्यान से सुनीं और काम में लग गया।

शाम को लौटते समय पुत्र एक टी.वी की दुकान पर रुका और तमतमाते हुए मालिक से बोला, "क्यों भाई, दो दिन पहले ही टी.वी. ले कर गया और अभी ही पिक्चर टयूब उड़ गया। जब दो दिन बाद यह आलम है तो आगे न जाने क्या होगा।"....वह गुस्से में मालिक से बोला,...."आप ऐसा कीजिए, वह सेट बदल कर दूसरा दे दीजिए।"

"अरे साहब आप नाराज क्यों होते हैं, ...आप ऐसा कीजिए, टी.वी. हमारी दुकान पर पहुंचा दीजिए, हम उसे कम्पनी भेज देंगे। वहां से या तो बदल कर या बन कर आ जाएगा।" मालिक चापलूसी के लहजे में बोला।

"....कितना समय लगेगा ?" उसने पूछा।

"अरे.... बस तीन चार महीने में टी.वी. एकदम फर्स्ट क्लास बन कर आ जाएगा।......अब आप नाराजगी छोड़िये और एक कप चाय पीजिए,....आप तो हमारे भगवान हैं, भला भगवान को भी कोई...... ।" दुकानदार ने नौकर को चाय लाने भेज दिया और वह निराशा से दुकानदार का चेहरा देख रहा था, कानों में पिता जी के शब्द गूंज रहे थे–"ग्राहक हमारे भगवान हैं उनकी शिकायतों को एक कान से सुनकर......... ।"

691-बी, कृष्णा नगर रेलवे कालोनी,
पोस्ट-बशारतपुर,
गोरखपुर-273001

चुनौतियों से भरा है सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य

डा० नन्दलाल
वरिष्ठ अध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग,
काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ० प्र०)

दिसम्बर के तीसरे सप्ताह में नई दिल्ली में आयोजित "सबके लिए शिक्षा" (एजूकेशन फॉर ऑल) शिखर बैठक को सम्बोधित करते हुए यूनेस्को के महानिदेशक श्री फेड्रिको मेअर ने भाग लेने वाले नौ देशों – भारत, चीन, बंगलादेश, ब्राजील, इण्डोनेशिया, मिस्र, नाइजीरिया, मेक्सिको तथा पाकिस्तान (जी-9) से उस समय तक अपने देश में "शैक्षणिक आपातकालीन स्थिति" (एजूकेशनल इमरजेन्सी) की घोषणा कर देने का आह्वान किया जब तक कि प्रारम्भिक शिक्षा का लक्ष्य शत-प्रतिशत न प्राप्त कर लिया जाए। ज्ञातव्य हो कि शिखर बैठक में भाग लेने वाले देशों में विश्व की लगभग आधी जनसंख्या तो निवास करती ही है, विश्व के 75 प्रतिशत प्रौढ़ निरक्षर भी इन्हीं देशों में रहते हैं।

यूनेस्को के नवीनतम अनुमान के अनुसार इन देशों के लगभग सात करोड़ बच्चे आज भी प्रारंभिक शिक्षा से अछूते हैं। यदि इस दिशा में कुछ सार्थक न किया गया तो अनुमान है कि वर्तमान शताब्दी के अन्त तक यह संख्या बढ़कर 8.7 करोड़ हो जाएगी।

शिक्षा मानव विकास का एक आधारभूत घटक है। विज्ञान और लोकतन्त्र का वर्तमान युग तभी सार्थक हो सकेगा जब मनुष्य को विकास के केन्द्र में स्थापित किया जाएगा। इस अर्थ में "सबके लिए शिक्षा" के घोषित लक्ष्य प्रशंसनीय हैं लेकिन ये लक्ष्य बहुत चुनौतीपूर्ण हैं। परन्तु यदि जी-9 देश इसे प्राप्त नहीं करते हैं तो निश्चय ही आने वाले समय में उन्हें राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में गम्भीर अवरोधों का सामना करना पड़ेगा।

निस्संदेह भारत ने प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण (यूनिवर्सलाइजेशन) के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त की है और इस प्रक्रिया के मध्य बिन्दु अर्थात् 50 प्रतिशत की रेखा भी पार कर ली है। परन्तु आज भी भारत को विश्व में सर्वाधिक निरक्षरों वाला देश होने का 'गौरव' हासिल है। अनुमानतः विश्व के लगभग एक-तिहाई निरक्षर भारत में रहते हैं।

इस दिशा में सार्थक प्रगति के लिए विगत कुछ वर्षों में सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाए गए हैं जैसे- समग्र साक्षरता अभियान (टी.एल.सी), जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी.) तथा "आपरेशन ब्लैकबोर्ड" आदि। निश्चित रूप से यदि इन कार्यक्रमों को ईमानदारी से क्रियान्वित किया जाए तो भारत के शैक्षणिक जगत में क्रान्ति आ सकती है। इसी प्रकार राष्ट्रीय साक्षरता अभियान को क्षेत्र आधारित, समयबद्ध तथा परिणामोन्मुख बनाने का विचार भी सुविचारित है। लेकिन चार दशकों के बाद भी राष्ट्र सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य से लगभग 33 वर्ष पीछे चल रहा है। 14 वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की संवैधानिक प्रतिबद्धता का परिपालन कम और उल्लंघन अधिक हुआ है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा जारी आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि विगत वर्षों में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रभावी वृद्धि हुई है। आज भारत की प्राथमिक शिक्षा का फैलाव संभवतः विश्व में सबसे बड़ा है। 1950-51 में प्राथमिक विद्यालयों की जो संख्या 2,09,671 थी वह 1991-92 में बढ़कर 5,65,786 हो गई। उच्चतर प्राथमिक स्कूलों की संख्या इस अवधि में 13,596 से बढ़कर 1,52,077 हो गई। ये 7,17,863 स्कूल तथा 2,70,000 अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र सम्मिलित रूप से 13 करोड़ 60 लाख बच्चों को शैक्षणिक सुविधा मुहैया कराते हैं जबकि सन् 1951 में यही संख्या 2 करोड़ 23 लाख थी। पांचवें अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण (1986) के अनुसार भारत की 94.5 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को एक कि० मी० की दूरी के भीतर स्कूल उपलब्ध हैं और 83.98 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को 3 कि० मी० की दूरी के भीतर उच्चतर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध हैं।

प्राइमरी स्कूल स्तर पर नामांकन (इनरोलमेण्ट) में भी इसी प्रकार अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। सन् 1950-51 में यह 1 करोड़ 52 लाख था जबकि 1991-92 के दौरान वह बढ़कर 10 करोड़ 16 लाख हो गया है। उच्चतर प्राइमरी स्तर पर यह वृद्धि और भी अधिक है। इस अवधि में इस स्तर पर नामांकन 31 लाख से बढ़कर 3 करोड़ 41 लाख हो गया। प्राथमिक स्तर पर महिलाओं तथा अनुसूचित जाति के पंजीकरण में भी काफी वृद्धि हुई है। यद्यपि आज भी प्राइमरी तथा उच्चतर प्राइमरी स्तर पर नामांकन में महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 45.7 तथा 37.7 ही है परन्तु फिर भी लड़कों की तुलना में उपरोक्त दोनों स्तरों पर लड़कियों के

पंजीकरण में अधिक तीव्र गति से वृद्धि हुई है।

परन्तु इससे अति प्रसन्न होने की बात नहीं है। हमारे शिक्षा नियोजकों को स्कूल स्तर या उसके पहले भी पढ़ाई छोड़ देने वालों (ड्रॉप-आउट्स) की बढ़ती संख्या से चिन्तित होना चाहिए। विशेष रूप से महिलाओं के संदर्भ में यह बात ज्यादा चिन्ताजनक है। कक्षा एक में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों में से लगभग 50 प्रतिशत कक्षा 5 या उससे भी पूर्व पढ़ाई छोड़ देते हैं। बीच में ही पढ़ाई छोड़ने वालों की दर महिलाओं में अधिक है। प्राइमरी स्तर पर यह 49.69 प्रतिशत तथा उच्चतर प्राइमरी स्तर पर 68.3 प्रतिशत है। राजस्थान जैसे राज्यों में स्थिति और भी ज्यादा दयनीय है। यहां कक्षा एक में प्रवेश लेने वाली 80 प्रतिशत लड़कियां और 70 प्रतिशत लड़के कक्षा 5 तक पहुंचने से पहले ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। बालिका वर्ग में इतने ज्यादा "ड्रॉप-आउट" के मुख्य कारण हैं: निवास स्थान के निकट स्कूलों की अपेक्षाकृत अनुपलब्धता, अध्यापिकाओं की अपेक्षाकृत ज्यादा अनुपस्थिति तथा अशिक्षित माताओं की बहुतायत आदि।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के मार्ग में एक और बाधा नीरस एवं जड़ स्कूली पाठ्यक्रम तथा स्कूल-बैग का निरन्तर बढ़ता जा रहा बोझ भी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के पुनरीक्षण के लिए गठित आचार्य राममूर्ति कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार एक-तिहाई से 50 प्रतिशत के बीच बच्चे स्कूल को "उबाऊ, अप्रासंगिक और भयकारी" पाते हैं। इसके अतिरिक्त 40 से 50 प्रतिशत बच्चे आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक मजबूरियों के कारण स्कूल छोड़ देते हैं।

उच्च "ड्रॉप आउट" दर का कारण मात्र संसाधनों की कमी नहीं है। वर्तमान ग्रामीण संरचना में शिक्षा, विशेषकर लड़कियों की शिक्षा, को अपेक्षाकृत कम महत्व दिया जाता है। इसके लिए आवश्यक है शिक्षा की योजना सामाजिक और आर्थिक सन्दर्भ को ध्यान में रखकर बनायी जाए। शिक्षा सार्थक भूमिका का निर्वाह तभी कर पायेगी जब इसका तारतम्य विकास के मुद्दों से जोड़ दिया जाए। यह स्वीकार करके कि पंजीकरण की संख्या ही अपने में महत्वपूर्ण नहीं है हमारे नीति-नियामकों ने बुद्धिमता का परिचय दिया है। अब जोर मात्र पंजीकरण पर न दिया जाकर इस बात पर दिया जा रहा है कि कितने विद्यार्थियों ने पढ़ाई जारी रखी।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में "सबके लिए शिक्षा" का अभिप्राय प्राथमिक शिक्षा का "सार्वभौमिकीकरण" मात्र न होकर बाल्यावस्था में शिशु की समुचित स्वास्थ्य सुविधाओं तथा विकासपरक गतिविधियों का विस्तार भी है, विशेष रूप से निर्धन और सुविधाहीन बच्चों के लिए। 15-33 आयु वर्ग में निरक्षरता में कमी लाना भी कार्यक्रम में सम्मिलित है। प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण को प्राप्त करने के लिए तैयार की गई रणनीति का एक महत्वपूर्ण घटक गैर-औपचारिक शिक्षा का कार्यक्रम है। इसी के साथ अब कार्यक्रम का मुख्य बल सबके लिए शिक्षा के समान अवसर के स्थान पर महिला शिक्षा पर है।

समग्र साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लिंग और क्षेत्रगत विषमताओं को दूर करना अनिवार्य है। एक ओर केरल ने शत-प्रतिशत साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया है तो दूसरी ओर राजस्थान में दर 30 प्रतिशत से भी कम है। केरल में चलाए गए साक्षरता अभियान ने एक नया मॉडल दिया है। लेकिन उच्च स्तर की जिस अभिप्रेरणा तथा स्वेच्छा-आधारित अभियान के दर्शन केरल में हुए, वह उत्तरी राज्यों में नहीं के बराबर हैं। इसी भाग में निरक्षरों की बड़ी जमात भी विद्यमान है, खासतौर से महिला निरक्षरों की। इसका अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि 247 जिलों में से जिन 155 जिलों की महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से कम है उनमें उत्तर प्रदेश में 51 जिले, मध्य प्रदेश में 38 जिले, राजस्थान में 27 जिले तथा बिहार में 39 जिले शामिल हैं। शिक्षा के क्षेत्र में लिंगगत भेद अनुसूचित जाति और जनजाति में और भी चिन्ताजनक है।

महिला साक्षरता की दर 1951 में 8.86 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 39.19 प्रतिशत हो गई है। पुरुष साक्षरता के क्षेत्र में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्तराल 1981 में 27.1 से घटकर 26.3 प्रतिशत हो गया है परन्तु महिला साक्षरता के क्षेत्र में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्तराल 1981 में 34.6 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 35.1 प्रतिशत हो गया है। आज महिलाओं में साक्षरता दर लगभग वही है जो तीन दशक पहले पुरुषों की थी।

राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद की प्रो. उषा नायर द्वारा किए गए एक विस्तृत सर्वेक्षण का यह निष्कर्ष है कि ग्रामीण अल्प-विकास तथा भारी संख्या में ग्रामीण क्षेत्र में "ड्रॉप आउट्स" या महिला निरक्षरता के बीच अनिवार्य सम्बन्ध है। लड़की के साथ न केवल शिक्षा के मामले में भेदभाव किया जाता है बल्कि भोजन और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी इन्हें निम्नतर प्राथमिकता दी जाती है। कुपोषण, लिंग-भेद, अल्पायु में विवाह, आये दिन गर्भधारण आदि महिला-निरक्षरता के प्रमुख कारण हैं।

अनुभव पर आधारित निष्कर्षों से अब यह भी स्थापित हो गया है कि महिला साक्षरता और प्रजनन दर के बीच विपरीत सम्बन्ध होता है। यही स्थिति शिशु मृत्यु दर के सम्बन्ध में भी

है। जहां-जहां महिलाओं का शैक्षणिक स्तर बढ़ा है, वहां-वहां समग्र प्रजनन दर कम होती गई है।

नई शिक्षा नीति में यह तो माना गया कि शिक्षा में निवेश भारत के वर्तमान तथा भविष्य में निवेश है, परन्तु योजनाओं में शिक्षा के लिए किए गए आवंटन में यह बात कम ही देखने को मिली। वर्तमान समय में भारत अपने सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 3.7 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करता है। कोठारी आयोग ने अपनी रिपोर्ट में सकल राष्ट्रीय उत्पाद के न्यूनतम 6 प्रतिशत के शिक्षा में निवेश की संस्तुति की थी। भारत में प्रति व्यक्ति शिक्षा व्यय लगभग 600 रुपये हैं जबकि विकसित विश्व में यह 10,000 से 20,000 रुपये प्रति व्यक्ति है।

वैसे यह सन्तोष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षों में शिक्षा पर किये जाने वाले समग्र व्यय में प्राथमिक शिक्षा पर व्यय निरन्तर बढ़ता गया है, विशेष रूप से, नयी शिक्षा नीति के क्रियान्वित होने के बाद। सातवीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा के लिए निर्धारित समग्र व्यय में प्राथमिक शिक्षा की 42.6 प्रतिशत की हिस्सेदारी रही जबकि आठवीं पंचवर्षीय योजना में यह 54.7 प्रतिशत की हो गई।

समग्र साक्षरता अभियान को मिल रही सफलता से यह उम्मीद की जा सकती है कि "सबके लिए शिक्षा" आने वाले वर्षों में दिवा-स्वप्न मात्र नहीं रह जाएगी। पर उत्तरी भारत के राज्यों में साक्षरता अभियान के आधारों और कार्य-प्रणाली को चाक-चौबन्द रखना इसकी अनिवार्य शर्त है। पिटी-पिटाई लीक से अलग हटकर नये विचारों और कार्य शैली को अपनाने के विगत वर्षों में अच्छे परिणाम निकले हैं। "सबके लिए शिक्षा" अभियान को भी क्रियान्वयन के लिए योग्य और ईमानदार पदाधिकारियों तथा निष्ठावान एवं निःस्वार्थ कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है।

सन् 2000 तक सबको शिक्षा उपलब्ध कराने का उद्देश्य साहसिक परन्तु चुनौतीपूर्ण भी है जिसके लिये जमीन-आसमान एक करने की जरूरत होगी। अब तक जिस प्रकार के यथास्थितिवादी अथवा आधे-अधूरे मन से हम नीतियों का क्रियान्वयन करते रहे हैं, यदि वही गति साक्षरता-अभियान की भी रही तो परिणति भी सम्भवतः वही होगी जो अब तक चलाये गये बहुत-से कार्यक्रमों की हुई है। शिक्षा सामाजिक परिवर्तन तथा तीव्र विकास का एक प्रभावकारी संयंत्र है। देश अब इस दिशा में और लापरवाही बर्दाश्त करने की स्थिति में नहीं है।

(पृष्ठ 13 का शेष)

उन क्षेत्रों का पर्यावरण काफी प्रभावित होगा। इसलिये सभी मत्स्य उत्पादकों को पर्यावरण बोध कार्यक्रम जानने के लिए उत्साहित करना आवश्यक है। अब भारत सरकार ने देश में सभी मत्स्य उत्पादन परियोजनाओं को स्थापित करने से पहले पर्यावरण एवं वन मंत्रालय से उनका अनापत्ति आदेश प्राप्त करना आवश्यक कर दिया है। मंत्रालय इन परियोजनाओं का "पर्यावरणीय मूल्यांकन" अर्थात परियोजनाएं पर्यावरण की दृष्टि से संतुलित हैं अथवा नहीं ज्ञात कर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा। उसके फलस्वरूप ही परियोजनाएं स्वीकृत या निरस्त की जायेंगी।

केन्द्र सरकार के पर्यावरण मंत्रालय द्वारा जुलाई 1983 में भी राज्य सरकारों को एक मार्गदर्शन जारी किया गया जिसमें किसी भी परियोजना के स्थापन एवं कार्यान्वियन से उसकी प्राकृतिक जल संपदा पर पड़ने वाले प्रभावों का विवरण देना आवश्यक होगा। इसके उपरांत ही उसे स्थापित करने का आदेश पारित करने के निर्देश दिये जायेंगे। इसके अतिरिक्त परियोजना पूर्ण रूप से कानूनन वाद विवाद रहित हो अन्यथा संविधान की धारा 19(1) (जी) मूलभूत अधिकार के तहत न्यायालय में किसी को भी इसे चुनौती देने का प्रावधान किया गया है।

भारतीय संविधान में प्राकृतिक जल संपदाओं के संरक्षण हेतु बनाये गये नियमों के रहते हुए भी जल क्षेत्र प्रतिदिन प्रदूपित होते जा रहे हैं। अतः सरकार को नियमों को कठोरता से लागू करने के लिए कदम उठाने पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त मानव में प्रदूषण के प्रति जागरूकता लाने व उन्हें पर्यावरण बोध कराने की आवश्यकता है ताकि प्रदूषण पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सके।

कहानी

अपने-पराये

डॉ० शीतांशु भारद्वाज

बेलवाल साहब ने ड्राइंग-रूम में आकर शिवदत्त से पूछा, "क्यों रे शिब्बू! गाड़ी साफ कर दी ?"

कारपेट पर ब्रुश फेरते हुए शिवदत्त की गर्दन उनकी ओर मुड़ गई, "कर दी है, साब ! गाड़ी में ब्रीफकेस भी रख दिया है।"

गाड़ी निकाल कर बेलवाल साहब अपने ऑफिस चल दिए। कॉलेज जाती हुई उमा भी शिवदत्त को काम बता गई, "अरे ओ ऊंट! आज मेरा गाऊन अवश्य धुल जाना चाहिए !"

शिब्बू ! श्रीमती बेलवाल भी गीले हाथ पोंछती हुई ड्राइंग रूम में चली आईं, जरा राशन की दुकान तक तो हो आ। पूछना कि चावल आ गए हैं या नहीं !"

काका नगर के उस सरकारी फ्लैट में शिवदत्त तमाम दिन अकेला ही खटता रहता है। बाजार से सौदा-सुलुफ लाने, कपड़े-लत्ते कूटने और झाड़ू बुहारी में ही उसके दिन बीतते आ रहे हैं। जब से उसने इस घर में पांव रखा है, बेलवाल परिवार कुछ अधिक ही आलसी होने लगा है।

झाड़ू-बुहारी के काम से निपट कर शिवदत्त फ्लैट के पिछवाड़े चल दिया। उसने एक बीड़ी सुलगा ली। दीवार के सहारे पीठ सटा कर वह अपनी थकान मिटाने लगा। पिछले वर्ष से वह अपने आपको यों ही यों ही कोसता आ रहा है। इस महानगर में आकर वह कई प्रकार के ऐब पालने लगा है। यहां आते समय उसकी आंखों में कितने प्यारे-प्यारे सपने थे ! मां-बाप ने भी तो उसे उन्हीं सपनों को पूरा करने के लिए यहां भेजा था।

पहाड़ी गांव का शिवदत्त सती बचपन से भी कुशाग्र बुद्धि का छात्र था। जूनियर हाई स्कूल की परीक्षा में उसने दो-दो विषयों में विशेष योग्यता प्राप्त की थी। आस-पास के चार गांवों में उसकी नामवरी हो आई थी।

"कहो हो सतीजी ! विद्यालय के प्रधानाध्यापक ने शिवदत्त के बारे में उसके पिजाजी से पूछा था, अब ?"

"कंगाली में आटा गीला ठहरा !" पद्मदत्त सती सींक से दांत खोदने लगे थे।

"होनहार बालक है।" प्रधानाध्यापक उन्हें प्रोत्साहित करने लगे थे, "इसे आप कहीं देश-मैदान की ओर भेजो। यहां पहाड़ में तो वह कुएं का मेंढक बन कर ही रह जाएगा।"

हां हो। अब कुछ न कुछ तो करना ही होगा।" पद्मदत्त ने कहा था।

.. और , यह बात भी नहीं थी कि पद्मदत्त के सगे-संबंधी देश-परदेश में थे ही नहीं। चार-पांच नौकर चाकर तो उन्हीं की जाति-बिरादरी के दिल्ली में थे। किन्तु वे बिरादरी के अहसान से बचना चाहते थे। दिल्ली में उनके जीजाजी ऊंचे दर्जे के अफसर थे। कभी-कभार जीजी गांव आ जाया करती थी। उन्होंने बेटे से पूछा था, क्यों "रे शिब्बू ! बुआजी के पास जाएगा ?"

"किधर ?" भोले-भाले शिवदत्त के चेहरे पर कई भाव आने-जाने लगे थे।

"दिल्ली।" पद्मदत्त ने कहा था। "हां।" शिवदत्त मन ही मन मुस्करा दिया था, वहीं न जहां तारु और गणेशदा रहते हैं?"

"हां।" पद्मदत्त की अधपकी मूंछों के बीच हंसी की उजास बिखर आई थी। उन्होंने कहा था, "वहां फूफाजी तुझे पढ़ाएंगे। फिर तू भी उन्हीं की तरह से . . . ।"

"—हंऽ !" मां ने बीच में ही पिताजी के सपनों को कुतर दिया था, "यों आकाश में नहीं उड़ा करते। सोचना सरल होता है, करना कठिन !"

"तुम भी एक ही हो, रमोती !" पद्मदत्त खिलखिला कर हंस पड़े थे, "जीजी का और मेरा खून का रिश्ता है। शिब्बू भी तो उनके बेटे जैसा ही है।" मां चुप्पी लगा गई थीं। चारेक दिन बाद शिवदत्त गांव के पनदा के साथ दिल्ली चला आया था।

बेलवाल साहब उस गंवई बालक को नहीं पहचान पाए थे।

"जी साब मैं. . . ।" शिवदत्त उन्हें अपना परिचय दे पाता कि उसी समय वहां श्रीमती बेलवाल आ गई थीं । उसने उन्हें पायलागी की थी। वे उसे पहचान गई थीं, "अरे, यह तो अपने पद्मू का शिब्बू है !"

सदैव गांव में ही रहने वाले शिवदत्त को कुछ दिन तक शहरी चकाचौंध अच्छी लगी थी। जीजी ने उसे समझाया था कि बेलवाल साहब को वह फूफा न कहे। उन्होंने उसे यह भी ताकीद कर दी थी कि वह घर में पहाड़ी में नहीं बोलेगा। इन सब बंधनों की जकड़

में आकर जल्द ही वह महसूस करने लगा था जैसे वह गलत जगह आ गया हो ! उसे लगता जैसे कि वह परायों के बीच सांस ले रहा हो।

—अरे ! श्रीमती बेलवाल फ्लैट के पिछवाड़े चली आई, तू यहां बैठा हुआ है ! उधर तेरी चाय ठंडी हो रही है !

शिवदत्त के होंठों पर फीका हास्य उभर आया। जीजी के पीछे-पीछे वह भी रसोई-घर में चल दिया। वह गिलास में रखी हुई चाय को सुड़कने लगा। श्रीमती बेलवाल ने उसे विश्वास में लेकर पूछा, "शिब्बू ! तू नंदोली के मिश्रों को जानता है ?"

"वही न जो लखनऊ में बड़े साहब हैं ?"

"हां तो।" श्रीमती बेलवाल ने कहा, "हम लोग अपनी उमा का रिश्ता उनके यहां करना चाहते हैं।"

"हां तो।" शिवदत्त ने कहा, "वे तो खानदानी हैं,। आज भी वे लोग घोड़ों पर आया-जाया करते हैं।"

"उनका लड़का यहीं दिल्ली में ही इंजीनियर है।" श्रीमती बेलवाल उसकी राय लेने लगीं, "कैसा रहेगा ?"

"बहुत बढ़िया !" शिवदत्त ने उनका समर्थन कर दिया, "आप हां कर दो।" शिवदत्त चाय पी चुका था। श्रीमती बेलवाल के चेहरे पर कामकाजी भाव घिर आए। वे एक कनस्तरी को साफ करने लगीं," जाके जरा राशन का पता तो कर आ।"

शिवदत्त सौदा-सुलुफ के लिए बाजार जाने लगा। तभी श्रीमती बेलवाल ने उसे टोक दिया, "ऐसा कर कि हिमालय स्टोर से ढाई सौ ग्राम मशरूम लेते आना।"

शिवदत्त उनका मुंह ताकने लगा। उसके लिय यह नया नाम था।

"अरे, मशरूम नहीं जानता !" श्रीमती बेलवाल हंस दी, "अपने पहाड़ों में इसे च्यूं कहते हैं। शाम को वे लोग उमा को देखने आ रहे हैं न !"

शिवदत्त मुस्करा दिया। फ्लैट की सीढ़ियां उतर कर वह बाजार चल दिया।

शिवदत्त का बेलवाल परिवार का चाल-चलन संदेहास्पद ही लगने लगा। कभी भी तो उसने उन लोगों को पहाड़ी में बात करते हुए नहीं देखा। जीजी तो पूरी ललाइन ही बन गई हैं। वहां से हरदम ही उसे परायेपन की गंध मिला करती है। कभी-कभार उसे मां-बाप की याद आने लगती है। वे दोनों उसे लेकर कितने सारे सपने देखते रहे हैं !

शिवदत्त को उस परिवार में रहना रास नहीं आया। एक दिन उसने हाथ झाड़ते हुए श्रीमती बेलवाल से कहा, "जीजी !"

दाल बिनती हुई श्रीमती बेलवाल उसे देखने लगीं। शिवदत्त ने छूटते ही कहा, "मैं गांव जा रहा हूं।"

"गांव !" श्रीमती बेलवाल की आंखों में फैलाव आ गया।

"हां जीजी। बौज्यू बीमार चल रहे हैं।" उसने यों ही कह दिया।

बेलवाल साहब आफिस के लिए तैयार हो रहे थे। वह बातचीत उनके कानों में भी पड़ चुकी थी। उन्होंने पर्स से सौ रुपये का नोट निकाल कर उसे शिवदत्त को थमा दिया। शिवदत्त फूफी का मुंह ताकने लगा। श्रीमती बेलवाल ने कहा, "रख ले तेरे किराये-भाड़े के हैं।"

शिवदत्त ने यह नोट लिया। बेलबाल साहब के पीछे-पीछे वह भी खाली हाथ फ्लैट की सीढ़ियां उतर गया। परिवार का कोई भी सदस्य उसे नीचे छोड़ने नहीं आया।

शिवदत्त जब फ्रैंड्स कालोनी की पंद्रह नंबर कोठी के गेट पर पहुंचा तो उसे देख कर एक साथ ही दो-दो अलसेशियन कुत्ते भौंकने लगे। वह बुरी तरह से डर गया।

तभी गेट पर पानसिंह चला आया। उसे देख कर पानसिंह की आंखों में आश्चर्य भर आया, "अरे तूं ?" शिवदत्त मुस्करा दिया।

--"आ, अंदर आ जा !" पानसिंह ने गेट खोल कर उसे अपने साथ अपनी कोठरी में ले गया।

शिवदत्त को जल-पान करवा कर पानसिंह ने कहा, "तू तो साहब लोगों के यहां था भई ! बेलवाल साहब तो तुम्हारे सगे फूफा हैं !"

"दूर के ढोल सुहावने लगते हैं, पनदा।" शिवदत्त को कभी पढ़ी हुई लोकोक्ति की याद आ गई।

"हूं।" पानसिंह ने उससे पूछा, "अब क्या इरादा है ?"

"नौकरी करूंगा" शिवदत्त ने मुस्करा दिया।

"यानी भांडे मांजेगा ?" पानसिंह के माथे पर ढेर सारी सलवटें उभर आई।

"हर्ज भी क्या है ?" शिवदत्त का वही निश्चय-भरा स्वर था, नौकरी करता हुआ आगे भी पढ़ लूंगा।

"एक जगह तो यहीं कोठी में ही खाली पड़ी है। पानसिंह सिर खुजलाने लगा, पर तेरे वश. . .।"

"मैं सब कर लूंगा।" शिवदत्त का चेहरा-फूल सा खिल आया।

दूसरे दिन पानसिंह ने शिवदत्त को खुराना साहब के सामने ला खड़ा किया।

"ठीक है।" साहब ने ओ०के० कर दिया, "तेरा आदमी है

तो फिर ठीक ही होगा !"

कोठी में शिवदत्त को अपने मनपसंद का काम मिल गया। सुबह-शाम वह मदर डेयरी से दूध ले आता। उसके बाद बच्चों को बाबा-गाड़ी में बिठला कर उन्हें घुमाने ले जाता। नौ बजे वह सारे कमरों की झाड़ू-बुखारी करने लगता। दोपहर को वह खुराना साहब को खाना दे आता। शाम को वह फिर से बच्चों को घुमाने के लिए चल देता। रात को नौ बजे वह सारे लोगों के बिछौने बिछा देता। इस प्रकार वह अपने काम से निवृत्त हो जाता।

शिवदत्त को लगने लगा जैसे उसके मां-बाप के सपने पूरे होने लगेंगे। उसने बीच में रुकी पड़ी पढ़ाई फिर से शुरू कर दी। बाजार से वह बहुत सारी पुस्तकें खरीद लाया। निजी रूप से वह हाई स्कूल की तैयारी करने लगा। रात के नौ बजे से बारह एक बजे तक वह नियमित रूप से अध्ययन करने लगा।

उस रात बीड़ी फूंकता हुआ शिवदत्त अंग्रेजी की पाठ्य पुस्तक पढ़ रहा था। रात के दस बज रहे थे। न जाने कहां से वहां रजनी बीवी आ पहुंची। बीड़ी बुझा कर वह खाट से उठ खड़ा हुआ।

—"बीड़ी पीता है ?" रजनी ने उसके लिए आंखें तरेर दीं।

—"अब से नहीं पिया करूंगा।" उसने वहीं अपने कान पकड़ लिए, "इस बार मुझे माफ कर दें !"

"तूं तो पढ़ा-लिखा है न ?" रजनी ने पूछा।

सहमति में शिवदत्त ने सिर हिला दिया। रजनी हंस दी। अगले ही क्षण उसका हाथ शिवदत्त के कंधे पर आ लगा, गंदी आदतें छोड़ दे ! पढ़ाई जहां समझ में न आए, मुझ से पूछ लेना।

"जी, बीवीजी!" शिवदत्त की गर्दन झुक गई।

रजनी बीवी ने शिवदत्त के ऊपर आत्मीयता की जो वर्षा की, उसमें वह पूरी तरह से नहा गया। ऐसे में उसे अपनों की याद हो आई। उमा जीजी भी तो रजनी जीजी की ही हम उम्र है। लेकिन उन्होंने कभी भी तो उसकी पढ़ाई के बारे में बात नहीं की। कभी भी तो बीड़ी पीने से मनाही नहीं की।

रजनी बीवी कोठी की ओर मुड़ गईं। शिवदत्त ने निश्चय कर लिया कि वह भविष्य में कभी भी बीड़ी नहीं पियेगा। वह निरंतर पढ़ता ही रहेगा।

उस संध्या को शिवदत्त पानसिंह के साथ सोदा-सुलुफ के लिए सुंदर नगर बाजार गया हुआ था। पानसिंह दुकान से सामान खरीद रहा था। वह यों ही एक ओर खड़ा था। तभी उधर से एक कार आती हुई दिखाई दी। उसके समीप आने पर उसकी गति धीमी हो आई। उसने उधर से मुंह फेर लिया। सर्र-से कार आगे चल दी।

"बेलवाल साहब को नहीं देखा ?" पानसिंह का हाथ उसके कंधे पर आ लगा।

"नहीं तो !" शिवदत्त ने अनजानों की भांति कहा।

"अरे ! अभी-अभी तो तेरे पास उनकी गाड़ी रुकी थी।" पानसिंह ने आंखें नचा कर कहा।

"पता नहीं।" शिवदत्त ने विषयांतर कर लिया, चलें ?

वहां से दोनों कार की ओर चल दिए। उन्होंने सारा सामान कार की डिक्की में रख दिया। उनके बैठते ही रजनी बीवी कार चलाने लगीं।

निजामुद्दीन के चौराहे पर लाल बत्ती थी। रजनी बीवी ने अपनी लेन में कार रोक दी। तभी बगल में शिवदत्त की जानी-पहचानी कार आकर रुकी। उस नीली एम्बेसडर कार को उमा जीजी चला रही थीं। शिवदत्त बाईं ओर देखने लगा।

चौराहे पर बत्ती ने रंग बदला। रजनी बीवी ने सर्र-से चौराहा पार कर लिया। वह नीली एम्बेसडर कार पीछे रह गई थी।

138, विद्या विहार,
पिलानी-राजस्थान 333031

कुरुक्षेत्र मंगाने का पताः

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली - 110001

अपारम्परिक ऊर्जा : समस्या एवं संभावनाएं

*पी० के० शर्मा एवं **एस० के० शर्मा

हमारे देश में बढ़ती हुई जनसंख्या तथा तीव्र गति से हो रहे औद्योगीकरण के कारण ऊर्जा की आवश्यकता में निरन्तर वृद्धि हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां देश की लगभग 74 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, आज भी लोग ऊर्जा के लिए पारम्परिक साधनों जैसे लकड़ी, पशुओं से प्राप्त गोबर के उपले, फसलों के अवशेष और पौधों की टहनियों आदि पर निर्भर हैं। देश में ऊर्जा तथा उसके साधनों के विकल्प के लिए सरकार तथा ऊर्जा के नीति निर्धारकों का ध्यान सन् 1973 में गया जब तेल उपलब्ध कराने वाले देशों ने तेल की कीमतों में बेतहाशा वृद्धि कर दी। इससे देश की अर्थव्यवस्था पर दबाव बढ़ने लगा। तभी यह भी देखा गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी जिन पारम्परिक साधनों का प्रयोग किया जा रहा है उसमें भी निरन्तर कमी आती जा रही है और यह कमी भविष्य में एक विकराल समस्या का रूप ले सकती है। ग्रामीण क्षेत्र में प्रयोग की जाने वाली ऊर्जा का 75 प्रतिशत भाग घरेलू कार्यों में ही उपभोग होता है। वनों के कटने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाने वाले अन्य साधनों का भी व्यवसायीकरण होने के कारण गांवों में ऊर्जा की समस्या निरन्तर बढ़ रही है। परिवारों के विघटन के कारण जोतें छोटी तथा विखंडित हो रही है जिसके कारण ईंधन उपलब्ध कराने वाले पेड़-पौधे लगाये जाने के स्थान पर काटे जा रहे हैं। एक तरफ तो ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा के स्रोतों की कमी हो रही है, दूसरी तरफ जितने साधन उपलब्ध हैं उनके प्रयोग में लाने के पुराने तरीकों के कारण बड़ी मात्रा में ऊर्जा नष्ट होती है। अतः उपलब्ध साधनों का समुचित रूप से प्रयोग कर उनसे अधिकतम ऊर्जा प्राप्त करने के लिए अपारम्परिक विकल्प की आवश्यकता है। आज के परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण क्षेत्रों में समुचित ऊर्जा के लिए अपारम्परिक साधन, विकल्प के रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं। सूर्य, वायु एवं बायोगैस ऊर्जा के ऐसे अपारम्परिक साधन हैं जिनमें ऊर्जा का अपार भंडार छिपा हुआ है तथा इनका प्रयोग वातावरण को प्रदूषण रहित तथा स्वच्छ रखने में भी सहायक है। पारम्परिक ऊर्जा स्रोत सदैव से विवादास्पद रहे हैं, यही कारण है कि अभी हाल में सर्वोच्च न्यायालय ने एक आदेश द्वारा देश के उन सभी उपक्रमों को, जो प्रदूषण फैलाते हैं, बन्द करने का ऐतिहासिक निर्णय दिया है।

अपारम्परिक ऊर्जा क्षमता

ऊर्जा विशेषज्ञों के एक अनुमान के अनुसार हमारे देश में उपलब्ध अपारम्परिक ऊर्जा स्रोतों की क्षमता लगभग 1,95,000 मेगावाट के बराबर है जिसमें से 31 प्रतिशत सौर ऊर्जा से, 31 प्रतिशत समुद्र के पानी से, 26 प्रतिशत बायोफ्यूल से तथा 13 प्रतिशत वायु से प्राप्त की जा सकती है। यदि इन साधनों की क्षमता का एक चौथाई भाग भी प्राप्त कर लिया जाए तो पेट्रोल की खपत में 2.23 करोड़ टन की कमी की जा सकती है जिससे 2,770 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकती है। लेकिन दुर्भाग्य से अभी भी हमारे देश में इस ऊर्जा की खपत अत्यधिक कम है। अपारम्परिक ऊर्जा के क्षेत्र में अभी हमारा यह प्रयोग ग्रामीण क्षेत्रों में बायो गैस तथा विकसित चूल्हों तक ही सीमित हैं। सूर्य और वायु से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए हमारे प्रयोग प्रारम्भिक स्थिति से गुजर रहे हैं। अपारम्परिक ऊर्जा के प्रयोग की आवश्यकता आज से 20 वर्ष पूर्व ही अनुभव की जाने लगी थी तथा यह सोच लिया गया था कि बढ़ती हुई ऊर्जा की पूर्ति के लिए यही सर्वोत्तम विकल्प है। आज स्थिति यह है कि वायु से लगभग 20 से 25 हजार मेगावाट ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। लेकिन इसमें अभी मात्र 45 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त हो पा रही है। इसी प्रकार बायोमास की प्रतिवर्ष 1700 मेगावाट क्षमता के स्थान पर केवल 10 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त की जा रही है।

अपारम्परिक ऊर्जा पर सरकारी व्यय

यदि अपारम्परिक ऊर्जा प्राप्त करने के लिए सरकार द्वारा किये गये प्रयासों पर दृष्टि डालें तो जो आंकड़े प्राप्त होते हैं वे सन्तोषप्रद नहीं हैं। सरकार की पिछली पंचवर्षीय योजनाओं को देखें तो ज्ञात होता है कि सातवीं पंचवर्षीय योजना में सम्पूर्ण ऊर्जा क्षेत्रों में 61,689 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान था। इस योजना काल में अपारम्परिक ऊर्जा विकास के लिए मात्र 662.9 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है जो कुल व्यय का केवल 1.07 प्रतिशत होता है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में इस व्यय में थोड़ी

* विभागाध्यक्ष, ग्रामीण अर्थशास्त्र एवं सहकारिता विभाग, बी० वी० सरल इंस्टीट्यूट बिचपुरी, आगरा।
** कृषि बैंकिग विभाग, भारतीय स्टेट बैंक, बिचपुरी, आगरा।

वृद्धि की गई है। कुल ऊर्जा के लिए 1,15,661 करोड़ रुपये हैं जिसमें से अपारम्परिक ऊर्जा के लिए 1,465.4 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान है। यह भी कुल व्यय का 1.26 प्रतिशत ही है।

अपारम्परिक ऊर्जा का विकास

अपारम्परिक ऊर्जा के विकास के लिए अब तक देश में जितनी परियोजनाएं चलाई गई हैं उनमें पिछले दशक में बायोगैस परियोजना ही कुछ सफलता अर्जित कर सकी है। सन् 1981-82 से 1991-92 की अवधि में इनकी संख्या में 600 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। एक अनुमान के अनुसार इस अवधि में बायोगैस संयंत्रों की संख्या 25 हजार से बढ़कर 1 लाख 75 हजार हो गई है। मार्च 1992 में देश में बायोगैस संयंत्रों की कुल संख्या 15 लाख 75 हजार होने का अनुमान है तथा वर्ष 1992-93 के लिए 1 लाख 35 हजार और बायोगैस संयंत्र लगाने का लक्ष्य था। यदि देश में इन संयंत्रों को लगाने की क्षमता पर एक दृष्टि डालें तो यहां 1.20 करोड़ बायोगैस संयंत्र स्थापित किये जा सकते हैं। इस क्षमता का लाभ प्राप्त करने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि देश में 7 लाख ऐसे संयंत्र प्रतिवर्ष लगाये जाएं तभी हम 15 वर्ष में सम्पूर्ण क्षमता का प्रयोग कर सकते हैं।

नवीनतम आंकड़ों के अनुसार बायोगैस के क्षेत्र में महाराष्ट्र ने सर्वाधिक सफलता अर्जित की है। देश के कुल बायोगैस संयंत्रों में से 30 प्रतिशत अकेले इसी प्रदेश में स्थापित किये गये हैं जबकि 13 प्रतिशत का योगदान देकर उत्तर प्रदेश दूसरे स्थान पर है। इसी प्रकार गुजरात 10 प्रतिशत, तमिलनाडु 9 प्रतिशत तथा आन्ध्र प्रदेश 7 प्रतिशत बायोगैस संयंत्र लगाकर अन्य स्थानों पर है। एक सर्वेक्षण के अनुसार यह संयंत्र अधिकतर लघु तथा सीमांत कृषकों द्वारा ही लगाये गये हैं और इनसे वे घरेलू ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति कर रहे हैं। विडम्बना यह है कि इस कार्यक्रम को आरम्भ हुए 10 वर्ष से अधिक समय हो गया है लेकिन अब तक हमारे वैज्ञानिक कोई सर्वोत्तम तकनीक का निर्धारण करने में सफल नहीं हुए हैं। परिणामस्वरूप यह संयंत्र लम्बी अवधि तक कार्य नहीं कर पाते हैं तथा उचित रख-रखाव के अभाव में 50 प्रतिशत से अधिक संयंत्र खराब पड़े हैं। बायोगैस संयंत्रों के निर्माण तथा उचित संचालन के अभाव के कारण निम्न कमियां देखी गई हैं, जिनका समय पर निदान करना आवश्यक है:

1. ईंट तथा सीमेंट से बने संयंत्रों की नींव में पानी रिसने के कारण डाइमेस्टर की दीवार में दरार पड़ जाती है। इसके लिए आवश्यक जांच करके मरम्मत करवानी चाहिए।
2. गलत तरीके से डोम का निर्माण करने पर गैस लीक करती है। इसके लिए डोम का निर्माण कुशल कारीगरों से कराना चाहिए।
3. पानी का ट्रैप गलत तरीके से लगाने पर पाइप लाइन में पानी का जमाव हो जाता है। इसके लिए ढलान की जांच कर पानी के ट्रैप को सही स्थिति में ठीक करना चाहिए।
4. कभी-कभी घोल की कमी के कारण डोम तथा पाइप लाइन में छेद हो जाने से तथा संयंत्र में पपड़ी बन जाने से घोल का स्तर इनलेट तथा आउटलेट चैम्बर में ऊपर नहीं उठता। ऐसी स्थिति में और घोल डालकर अथवा डोम में बांस से घोल को हिलाने से समस्या का निदान सम्भव है।
5. गैस पाइप में रुकावट हो जाने पर स्टोव में गैस नहीं जाती है। ऐसी स्थिति में पानी के ट्रैप को खोलकर गेटवाल्व से पानी छोड़ना सहायक होता है।
6. गैस का दबाव अधिक होने या नौजिल पर कार्बन आ जाने के कारण लौ बर्नर से हटकर निकलने लगती है। यह समस्या गैस आउटलेट वाल्व को ठीक और साफ कर दूर की जा सकती है।
7. बर्नर में लौ बुझ जाने की शिकायत गैस के कम दबाव के कारण होती है तो इसके लिए गैस की मात्रा की जांच कर लें।

ईंधन की खपत को कम करने तथा ऊर्जा के अधिक उपयोग के लिए विकसित चूल्हे भी सहायक सिद्ध हो रहे हैं। इन चूल्हों के प्रयोग से 79 लाख टन लकड़ी प्रतिवर्ष बचाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त इनके प्रयोग से खाना पकाने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य को हानि नहीं पहुंचती तथा घर में स्वच्छता बनी रहती है क्योंकि ईधन से निकलने वाला धुआं एक चिमनी की सहायता से घर के बाहर चला जाता है। हमारे देश में मार्च 1992 के अन्त तक 1.25 करोड़ से अधिक विकसित चूल्हे स्थापित किए गए हैं तथा वर्ष 1992-93 के लिए 17.5 लाख और चूल्हे स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है।

विकसित चूल्हों की क्षमता का अधिक लाभ उठाने तथा ईंधन के कम प्रयोग को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि इनका निर्माण सक्षम तकनीकज्ञों की देखरेख में किया जाए अन्यथा इसमें बहुत सी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं जिससे खाना पकाने में अधिक समय लगता है और ईंधन की खपत भी अधिक होती है। इस प्रकार के चूल्हों में जो समस्याएं आती हैं उनके निदान के लिए संक्षेप में जानना आवश्यक है।

(1) कभी-कभी ईंधन से उत्पन्न ज्वाला चिमनी के बाहर निकलती दिखाई देती है तथा खाना पकाने के बर्तन को ठीक ताप नहीं मिलता। इसका कारण चिमनी में कार्बन का एकत्रित हो जाना है जिसे साफ कर देना चाहिए। दूसरा कारण चूल्हे तथा चिमनी के मिलान पर नियंत्रण पट्टी का दोषपूर्ण होना है जिसका मुंह चौड़ा होने से प्रज्ज्वलित गैसें ऊपर निकल भागती हैं।

(2) कभी-कभी देखा गया है कि आग भली प्रकार प्रज्ज्वलित नहीं होती है। यह समस्या सर्दियों में देखी गई है। इसके लिए मिट्टी के तेल से भीगा एक कपड़ा चूल्हे के तले में रखकर आग लगानी चाहिए। इससे निकली ज्वाला से ताप बढ़ेगा और इसके प्रभाव के कारण ईंधन जलने लगेगा।

(3) धुएं का एक चेम्बर से दूसरे में पास न होना। इसके लिए चेम्बर को देखें कि कहीं रुकावट तो नहीं है। यदि है तो उसे साफ कर दें।

(4) यदि बैफिल खाना पकाने के बर्तन से स्पर्श कर रहा है तो धुआं चिमनी से नहीं निकल पाता। अतः बैफिल को नीचे की तरफ कर दें।

अपारम्परिक ऊर्जा के प्रयोग के लिए सौर ऊर्जा तथा वायु ऊर्जा के प्रयोग के लिए भी बड़े स्तर पर देश में प्रयास जारी हैं। सूर्य से प्राप्त ताप को विद्युत में परिवर्तित करने के लिए नये-नये अनुसंधान किए जा रहे हैं तथा इसका एक प्रयोग स्ट्रीट लाईट, सोलर कुकर आदि के रूप में देखा जा सकता है। हमारे देश में वायु ऊर्जा प्राप्त करने के लिए 470 वायु स्टेशन स्थापित हो चुके हैं जिनमें से 251 ने कार्य करना आरम्भ कर दिया है।

अतः निःसंकोच कहा जा सकता है कि देश में बढ़ती हुई ऊर्जा की खपत को पूरा करने, प्रदूषण को कम करने तथा विदेशी मुद्रा की बचत के लिए अपारम्परिक ऊर्जा ही ऐसा विकल्प है जिससे देश की ऊर्जा मांग को पूरा किया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित करे ताकि वे अनुसंधान करके इस ऊर्जा के प्रयोग को सरल बनाने के लिए ऐसे उपकरण तैयार करें जो महंगे न हों तथा उनके रख-रखाव में कम से कम कठिनाई आये। ग्रामीण क्षेत्रों में नए उपकरणों के अधिक से अधिक प्रयोग के लिए भी सरकार प्रसार कार्यकर्ताओं की जिम्मेदारी सुनिश्चित करे तथा लाभार्थियों को प्रोत्साहन देने के लिए अनुदान जारी रखे। साथ ही जितना बल इन उपकरणों के स्थापित करने पर दिया जाता है उससे अधिक इनकी निरन्तरता तथा सुचारुता बनाए रखने पर दिया जाए। रख-रखाव में कमी तथा इनके प्रयोग में दिखाई गई उदासीनता इन्हें ठप कर देती है और नये उत्सुक लाभार्थी बजाय प्रोत्साहित होने के सदा के लिए निरुत्साहित हो जाते हैं। इस दिशा में सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है।

मैंने

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिये। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार करना संभव नहीं होगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। विशेष अवसरों के लिए लेख कम से कम दो माह पहले भेजें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजें।

निर्मोही बादल

✍ ओम प्रकाश गर्ग "मधुप"

एक दिन पूछा बादल से,
क्यों नहीं बरसते हो मेरे गांव?
ओ निर्मोही!
इस प्यासी धरती पर,
एक पल को भी,
क्यों नहीं थमते हैं तेरे पांव?

वो बोला,
कैसे बरसूं,
कहां बरसूं,
दीखती नहीं मुझे यहां कोई ठांव!

न यहां कोई वन है,
न वनस्पति,
न ही वृक्षों की कहीं छांव,
रोक सके जो,
थिरकते, ठुमकते मेरे उन्मादी पांव!

रे मानव!
तेरे ही स्वार्थ ने,
महत्वाकांक्षी! तेरे ही दम्भ ने,
निर्ममता से काट डाला है जिन्हें
वे ही वृक्ष, वन, अरण्य थे,
प्रकृति का श्रृंगार,
धरती का आंचल,
तेरे गांव का सौन्दर्य और
मेरे सम्मोहन का केन्द्र!
वो ही तो थी,
मेरे रमने की, थमने की, जमने की,
रिमझिम-रिमझिम बरसने की
मेरी मन हारिणी, कामणगारी ठांव!

रे मूढ़!
जरा सोच, कैसे रुकूं मैं,
कैसे झुकूं मैं,
घुटता है मेरा दम,
तेरे विद्रूप से,
पल-पल उजड़ते
प्रदूषित होते इस पर्यावरण से,
पग-पग गंधाते
इस दूषित वातावरण से!
उघाड़ी हो गई है धरा,
नंगे हो गए हैं गांव

फिर भी ओ नादान!
तू नहीं आता है बाज
तुझे आती ही नहीं शरम,
पर मुझे आती है लाज!
अब बोल कैसे?
हां, कैसे रुक पाऊं मैं तेरे गांव?
यहां थमते ही नहीं मेरे पांव!

–288, अग्रवाल भवन मार्ग,
बाड़मेर-344001 (राजस्थान)

चरवाहा विद्यालय

✍ अजय कुमार सिन्हा

भारत के पूर्वी भाग में स्थित बिहार कभी ज्ञान-विज्ञान के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध था। राजगिर के पास स्थित नालन्दा विश्वविद्यालय का खण्डहर आज भी अपने गौरवमय इतिहास का साक्षी है। पांचवीं से 12वीं शताब्दी तक यह आवासीय विश्वविद्यालय शिक्षा का महान केन्द्र था। यहां पाली, बौद्ध दर्शन, संस्कृत, हिन्दू दर्शन, चिकित्सा विज्ञान आदि के अध्ययन की व्यवस्था थी। दस हजार छात्र और दो हजार शिक्षक थे। यहां शिक्षा प्राप्त करने के लिए चीन, जापान, तिब्बत, बर्मा और थाईलैण्ड से विद्यार्थी आते थे। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेन सांग ने छात्र और शिक्षक के रूप में यहां 12 वर्ष बिताए थे। भागलपुर के पास स्थित विक्रमशिला विश्वविद्यालय भी एक अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र था। लेकिन आज इसी बिहार में 61.46 प्रतिशत जनता निरक्षर है। महिला साक्षरता की स्थिति तो बहुत ही खराब है। मात्र 23.10 प्रतिशत महिलाएं साक्षर हैं। पुरुष साक्षरता की दर 52.63 प्रतिशत है। लेकिन जो सबसे दुखद स्थिति है, वह यह है कि जो निरक्षर हैं, वे पीढ़ी दर पीढ़ी निरक्षर ही रह जाते हैं। उनके पूर्वजों ने कभी भी पाठशालाओं का मुंह नहीं देखा। वे निरक्षरता को अभिशाप न मानकर जीवन का अभिन्न अंग मान कर चलते हैं।

स्वतंत्रता के बाद सरकार ने शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए जो कदम उठाए उनमें साक्षरता का प्रसार भी शामिल है। हमारे संविधान निर्माताओं ने 6 से 14 आयु वर्ग के लिए अनिवार्य शिक्षा का लक्ष्य रखा। लेकिन यह लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सका। पिछड़े क्षेत्रों में अभिभावक बच्चों का विद्यालयों में नामांकन करें इसके लिए प्रोत्साहन रखे गए हैं जैसे मुफ्त भोजन व्यवस्था और निःशुल्क शिक्षा। इसके अतिरिक्त गांव-गांव में प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोले गए हैं। लेकिन इन प्रयासों के बावजूद बिहार की लगभग दो-तिहाई जनसंख्या आज भी निरक्षर ही है? इसके लिए सामाजिक-आर्थिक बनावट का विश्लेषण करना आवश्यक है। वैसे तो बिहार के प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक वर्ग में, प्रत्येक धर्म में, प्रत्येक जाति में निरक्षर लोग हैं, लेकिन शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में निरक्षरता अधिक है। इसी तरह अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अत्यन्त पिछड़े वर्गों में निरक्षरता अधिक है।

दूसरा सबसे बड़ा कारण गरीबी और सतत प्रयासों का अभाव है। ग्रामीण इलाकों में होश सम्भालते ही बच्चों को अपने मां-बाप के कामों में हाथ बंटाना पड़ता है। पशु चराने होते हैं, मां-बाप के साथ खेत-खलिहान में जाना पड़ता है। जातिगत पेशे को सीखना और समझना पड़ता है। यदि ऐसा नहीं करें तो जो आधा पेट भोजन प्राप्त होता है वह भी न मिले। सभी बच्चों की इच्छा होती है कि वे भी स्कूल जाएं लेकिन ऐसा कर पाना उनके लिए संभव नहीं। फिर ऐसी स्थिति में उन्हें साक्षर कैसे बनाया जाए। यह एक विकट समस्या और एक कठिन प्रश्न है। लेकिन इसका एक हल है कि ऐसी आबादी के लिए एक ऐसी व्यवस्था हो जो उनको साक्षर बनाए तथा कुछ आमदनी दिलाने में भी सहायक हो। बिहार के मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद यादव ने, जिन्हें होश सम्भालते ही चरवाहे का कार्य करना पड़ा था, इस उद्देश्य के लिए 1992 में चरवाहा विद्यालय खोलने की घोषणा की। प्रारम्भ में लोगों ने इसे गम्भीरता से नहीं लिया लेकिन मात्र दो वर्ष में ही इस तरह के विद्यालयों की संख्या बढ़कर 114 हो गई तथा 36 और विद्यालय खोलने का प्रस्ताव है।

चरवाहा विद्यालय अन्य विद्यालयों से किस रूप में भिन्न हैं? क्यों लोकप्रिय हैं? चरवाहा विद्यालय प्रारम्भिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, पशुपालन, मछलीपालन, परम्परागत पेशे और स्वास्थ्य सेवा इत्यादि का सम्मिलित रूप है। एक चरवाहा विद्यालय साधारणतया 110 एकड़ में फैला होता है। यह जमीन कहां से आयी? प्रत्येक विकास प्रखण्ड में, जिनकी संख्या लगभग 550 है, में सरकारी कृषि फार्म हैं। सभी कृषि फार्म सफेद हाथी सिद्ध हुए हैं। उनके पास काफी जमीन है। इसके अलावा बिहार में अनेक मंदिर, मठ और अन्य ट्रस्ट हैं जिनके पास सिलिंग से फालतू सैंकड़ों एकड़ जमीन है। इनका समाज के लिए कोई खास उपयोग नहीं है। चरवाहा विद्यालय के लिए आवश्यक जमीन इन्हीं स्रोतों से प्राप्त हुई है। चरवाहा विद्यालयों के चारों ओर सामाजिक वानिकी के अंतर्गत शीशम, आम, अमरूद इत्यादि के पौधे लगाए गए हैं जो पच्चीस-तीस वर्षों के बाद लाखों रुपये की संपत्ति हो जाएंगे। प्रत्येक विद्यालय में पशुओं के लिए चरागाह बना हुआ है। पशुओं की देखरेख के लिए विद्यालय की ओर से आदमी नियुक्त रहता है। चरवाहा छात्र अपने पशुओं को लेकर आता है। उन्हें चरागाह में छोड़ देता है और खुद पढ़ता है। यहां यह ध्यान देने योग्य बात है कि चरवाहा विद्यालय में केवल चरवाहा ही नहीं पढ़ता बल्कि लोहार, बढ़ई, धोबी, मल्लाह, बांस बेत बनाने, मछली पकड़ने, चमड़ा इत्यादि का काम करने वाले छात्र भी पढ़ते हैं। प्रत्येक विद्यालय में एक तालाब होता है। मछली पकड़ने में रुचि रखने वाले छात्र को पढ़ाई के बाद एक बार जाल फेंक कर मछली पकड़ने

का अवसर दिया जाता है। उसे बाजार में बेच कर वह अपने माता-पिता की मदद करता है। कपड़ा धोने का काम करने वाला छात्र कपड़े धोकर सूखने के लिए डाल देता है। जब तक कपड़े सूखते रहते हैं तब तक वह निश्चिंत होकर पढ़ता है। इसी तरह की व्यवस्था लोहार, बढ़ई, मोची जैसे परम्परागत पेशों में रुचि रखने वाले छात्रों के लिए की गई है।

छात्रों को वर्दी, किताब, कापी और स्लेट इत्यादि विद्यालय से उपलब्ध कराये जाते हैं। छात्रों को दोपहर का भोजन भी दिया जाता है। प्रारम्भ में प्रौढ़ शिक्षा के तर्ज पर पढ़ाया जाता है। जब छात्र कुछ पढ़ना-लिखना सीख लेते हैं तो उन्हें चौथी-पांचवीं कक्षा की शिक्षा दी जाती है। कक्षाएं खुले आसमान के नीचे होती हैं। विद्यालय के एक किनारे पर सीमेंट-ईंट का बना कई मीटर लम्बा ब्लैक बोर्ड होता है। शिक्षकों के बैठने के लिए सीमेंट की कुर्सियां बनाई गई हैं। यहां का वातावरण बहुत कुछ गुरुकुल जैसा है।

कुछ लोग प्रश्न करते हैं कि इस तरह की पढ़ाई से लाभ क्या है। पशु चराने, लोहार, बढ़ई का काम करने के लिए शिक्षा की क्या जरूरत है? इसके लाभ हैं। इससे आत्म-सम्मान बढ़ेगा, सोचने की शक्ति बढ़ेगी और विकास का रास्ता खुलेगा। आने वाली पीढ़ी यह नहीं कहेगी कि हमारे पूर्वज निरक्षर थे।

डी०/705-एम.एस. एपार्टमेंट,
कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नयी दिल्ली-110001

सफलता की कहानी

लालकी को साक्षरता रास आयी

✍ अशोक कुमार यादव

राजस्थान के आदिवासी जनसंख्या बहुल डूंगरपुर जिले में पिछले वर्ष चलाये गये संपूर्ण साक्षरता अभियान का ही कमाल है कि सिमीवाड़ा पंचायत समिति के काकराधरा गांव की 36 वर्षीया आदिवासी महिला लालकी ने अपने ही गांव में जीवन धारा योजना के अंतर्गत बनाये गए तीन लाख 85 हजार रुपये की लागत के एनिकट निर्माण कार्य पर मेट गिरी की है। एनिकट एक तरह का छोटा बांध होता है।

जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा प्रदत्त सहायता से भू-संरक्षण विभाग द्वारा काकराधरा गांव के नाले पर यह एनिकट लालकी की देख रेख में बनवाया गया है। नवम्बर 93 माह से प्रारंभ किये गये इस एनिकट के निर्माण के सम्पूर्ण कार्य की मेट बनी लालकी ने ही अपनी ही देख-रेख में कार्य लगभग पूरा करा दिया है।

सम्पूर्ण साक्षरता आंदोलन ने लालकी को लिखना-पढ़ना व गिनना सिखाया इससे उसमें आत्म-विश्वास और साहस का संचार हुआ। उसने एनिकट निर्माण के कार्य पर मेट बनना स्वीकार कर लिया। लगभग पांच माह से अधिक समय तक लालकी ने एनिकट निर्माण कार्य पर 15 पुरुष तथा 45 महिला मजदूरों को काम पर लगाया। उसने इन मजदूरों की उपस्थिति का ही हिसाब-किताब नहीं रखा अपितु उसने एनिकट निर्माण में लगी सामग्री का भी पूरा हिसाब रखा और मजदूरों को समय पर उनकी मजदूरी का भुगतान कराया।

लालकी अपने गांव के नाले पर बने इस एनिकट से बहुत खुश है, क्योंकि यह कार्य चला तो उसके गांव के लोगों ने इस वर्ष रोजगार के लिए गुजरात की ओर पलायन नहीं किया। दूसरा यह कि एनिकट बन जाने से काकराधरा की 45 हेक्टेयर भूमि में अतिरिक्त सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो गयी है। इस तरह से बेकार में बहकर चले जाने वाले पानी का फायदा तो गांव को हुआ ही है साथ ही पेयजल समस्या का भी समाधान हो गया है।

लालकी कहती है कि वह यदि पढ़ने नहीं जाती तो एनिकट के निर्माण में उसका मेट बनना दूर की बात थी।

जिला सूचना एवं जन संपर्क अधिकारी,
डूंगरपुर (राजस्थान) - 314001

कर्मक्षेत्र की मिटती लक्ष्मण रेखा

✍ डा० देव नारायण महतो

वैदिक विवाह संस्कार में "साम्राज्ञी श्वश्रुषेभव, साम्राज्ञी श्वश्रुवाभव" आदि मंत्रों द्वारा वधू के जिन अधिकारों का दर्शन सामने आया है वे नारी जाति की महत्वपूर्ण स्थिति का द्योतक है। नारी अपने पति गृह की साम्राज्ञी तथा उसके सभी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक कार्यों में सहयोगिनी थी। कालान्तर में नारी को माया एवं मुक्ति में बाधक मानकर तत्कालीन पुरुष प्रधान समाज के धर्माधिकारियों द्वारा उसके कर्मक्षेत्र की लक्ष्मण रेखा खींचकर उसे संकुचित कर दिया गया। चहारदीवारी के भीतर कमरतोड़ मेहनत करने के बावजूद भी भौतिक उपार्जन एवं शारीरिक बल में वह पुरुषों से हीन तथा पराधीन समझी गई ओर पुरुष की व्यक्तिगत सम्पत्ति मानी जाने लगी।

उन्नीसवीं शताब्दी के महान समाज सुधारकों के सफल प्रयासों तथा वैदिक धर्म के पुनरुत्थान एवं ब्रह्म समाज की स्थापना से नारी जाति में नवजागरण का प्रभात हुआ। निरंतर संघर्ष में नारी जाति ने अपने अस्तित्व का अटल संकल्प नहीं छोड़ा। प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान कठोर परिश्रम से चुनौती भरा कार्य करके समाज की उस धारणा को चूल तक हिला देने में सफलता पायी कि वह पुरुषों की अपेक्षा हीन है। चाहे खेत खलिहान हो या युद्ध भूमि, अंतरिक्ष अनुसंधान हो या खेल का मैदान, नृत्य गायन का क्षेत्र हो या रंगभूमि में धूम मचाने का, वायुयान की उड़ान भरनी हो या पर्वतारोहण करना हो, सर्वत्र उसने अपनी विजय पताका फहराई है।

स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं ने सामाजिक न्याय के तहत विकास की सभी प्रक्रियाओं में नारी की व्यापक भागीदारी को आवश्यक माना ताकि सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से सशक्त भारत का निर्माण किया जा सके। नारी को न केवल मताधिकार का अधिकार दिया गया अपितु पुरुषों की भांति सभी क्षेत्रों में समानता के साथ शिक्षा, प्रशिक्षण एवं रोजगार प्राप्त करने का समानाधिकार एवं कुछ दिशाओं में विशेषाधिकार भी दिये गये हैं।

स्वावलम्बन की दृष्टि से निम्नवर्गीय नारी सदा से पुरुषों की तुलना में अधिक परिश्रम द्वारा अर्थोपार्जन करती रही है, किन्तु विवशता के जामे में लिपटी इस वर्ग की नारी घोर अशिक्ष अन्धविश्वास एवं अभाव की असह्य पीड़ा झेलती हुई कुछ भ कर पाने में अक्षम हो जाती है। अर्थाभाव एवं स्वावलम्बन क प्रबल इच्छा ने मध्यवर्गीय शिक्षित नारी को घर की चहारदीवा तोड़कर रोजगार एवं स्वरोजगार के व्यापक क्षितिज पर पांव जमा में सहायता दी है।

विगत कुछ दशकों में शिक्षा, उच्चशिक्षा, औद्योगिक ए तकनीकी शिक्षा तथा प्रशिक्षण में नारियों की बढ़ती रुचि के कार आज वह सरकारी, गैर-सरकारी संगठनों में तथा स्वरोजगार ए सामाजिक सेवा के क्षेत्रों में कदम दर कदम बढ़ाती जा रही है इसके अनुकूल एवं सुखंद परिणाम का अन्दाजा हम कुछ आंकड़े के जरिए लगा सकते हैं। 1961 में भारत में प्रति हजार पुरुष क तुलना में कार्यरत महिलाओं की संख्या 225 थी जो बढ़कर 199 में 489 हो गई है। इसी तरह 1981 की जनगणना में कामकाज महिलाओं का प्रतिशत 19.6 था जो 1991 की जनगणना में बढ़क 23 प्रतिशत हो गया है। भारत सरकार के हाल के दावे के मुताबि एक तिहाई महिलाओं को रोजगार प्राप्त है।

अधिकांश महिलाएं रोजगार के लिए खेती पर निर्भर हैं। इसक बाद वे लघु एवं कुटीर उद्योगों में लगी हैं और फिर बुनाई हस्तशिल्प और सिलाई के काम में व्यस्त हैं। जंगल और मछल पालन के जरिए भी नारी जीविकोपार्जन कर रही है। नगरों में सबसे ज्यादा महिलाएं कल-कारखानों में नौकरी करती हैं। इसके बा सरकारी नौकरियों में मुख्य रूप से प्राथमिक शिक्षक व नर्स क रूप में कार्यरत हैं।कामकाजी महिलाओं की अच्छी खासी संख्य खिलौने एवं गुड़ियां बनाने के उद्योगों में लगी हुई है।

आज शिक्षित नारी संघीय और राज्यों की लोक सेवाओं तथ बैंकिंग और बीमा कम्पनियों की सेवाओं की प्रतियोगिता परीक्षाओ में अपनी प्रतिभा के बल पर भारी सफलता प्राप्त कर रही हैं फलस्वरूप केन्द्रीय व राज्य स्तर की प्रशासनिक, पुलिस, वित्त एव लेखा सेवाओं से लेकर इंजीनियरी सेवा, चिकित्सा सेवा, विमान चालन, प्रबन्धक एवं बैंक में प्रोबेशनरी अधिकारी तथा बीम विकास पदाधिकारी के रूप में अच्छी तादाद में नियुक्त होकर आ

रही हैं। इससे एक ओर जहां उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ी है वहीं दूसरी ओर उनकी आर्थिक स्थिति में भी सुधार हुआ।

सामान्य तौर पर नारी सवैतनिक नौकरी को ही तरजीह देती है, किन्तु हाल में बेरोजगारों की बढ़ती फौज की तुलना में सरकारी नौकरी की अल्पता को देखकर वह स्वरोजगार के क्षेत्र में तेजी से प्रवेश कर रही है। आर्थिक प्रगति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए सरकार ने विभिन्न स्तरों पर विशेष प्रकोष्ठ गठित किये हैं जो महिलाओं को स्वरोजगार कार्यक्रमों के संचालन में, उनके हितों की रक्षा करते हैं। रोजगार के विभिन्न अवसरों की सूचना तथा स्वरोजगार के चयन में सहयोग दिया जाता है। ग्रामीण महिलाओं को छोटे-मोटे धंधों से जोड़कर आत्मनिर्भर बनाने के लिए आई.आर.डी.पी. के तहत संचालित ''ट्राइसेम'' कार्यक्रम में विशेष प्रावधान किये गये हैं। इसके अतिरिक्त पंचायती राज के गठन में 30 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किये जा रहे हैं।

स्वावलम्बन की दिशा में नारी को जो सफलता मिली है वह प्रशंसनीय है किन्तु पर्याप्त नहीं है। अशिक्षित नारी को दरकिनार भी कर दिया जाए तो शिक्षित वर्ग की अधिसंख्य युवतियां स्वरोजगार के विभिन्न क्षेत्रों से अनभिज्ञ हैं। स्वरोजगार के व्यापक क्षेत्रों मे से कुछ मुख्य रूप से ऐसे क्षेत्र भी हैं जिन्हें महिलाएं बखूबी अंजाम दे सकती हैं। जैसे— कताई-बुनाई, कशीदाकारी, सिलाई, हेयर ड्रेसर व ब्यूटिशीयन, आन्तरिक साज-सज्जा अचार, मुरब्बा, पापड़, नमकीन, भुजिया आदि का उद्योग, सिले-सिलाये कपड़ों का उद्योग, कपड़े की रंगाई-छपाई उद्योग, मोमबत्ती, साबुन, अगरबत्ती, पोलिथीन बैग, चमड़े के पर्स व बैग उद्योग तथा कागज व पत्ते के दोने और प्लेट बनाना आदि।

कोई भी महिला अपनी इच्छा, रुचि और योग्यता के अनुरूप कोई भी कारोबार चुन कर अपनी आजीविका पाने के साथ कुछ और लोगों को भी रोजगार दे सकती है। इसके सम्बन्ध में आवश्यक सूचना, परामर्श तथा वित्तीय सहायता हेतु जिला उद्योग केन्द्र, सेवा योजना कार्यालय तथा लघु उद्योग विकास विभाग से सम्पर्क किया जा सकता है।

निजी क्षेत्र के उपक्रमों में आवश्यक शिक्षा के उपरान्त प्रशिक्षण से लेकर प्रबन्धक, लेखापाल, कम्पनी सचिव, प्रशासक कम्प्यूटर अधिकारी, सांख्यिकी अधिकारी, जनसंपर्क व श्र अधिकारी तथा आशुलिपिक और टंकक का कार्य कर सकती है बहुत सी महिलाएं इन क्षेत्रों में सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं

संगीत, नृत्य,गायन और वादन के क्षेत्र में प्रशिक्षण लेकर आ महिलाएं आकाशवाणी, दूरदर्शन, फिल्म तथा रंगमंच से सम्ब अकादमियों में नौकरी कर रही हैं।

फाइन आर्ट और कमर्शियल आर्ट के क्षेत्र में डिप्लोमा लेक टेक्सटाईल और फैशन डिजाइनर के रूप में वस्त्र उद्योगों, विज्ञाप एजेंसियों तथा प्रकाशन समूहों में अच्छा कैरियर बनाया जा सक है।

इनके अतिरिक्त कई क्षेत्र ऐसे हैं जहां नारी अपना पांव ज रही है। इनमें पत्रकारिता, अनुवादक, दूभाषिया, पुस्तक प्रकाश बी. फार्मा, टेलीफोन आपरेटर, हेल्थविजिटर, कम्प्यूटर प्रोग्रामिं बीमा एजेंट, माडलिंग, सेल्सगर्ल्स, रेडियो एवं टी० वी० मेकेनि एल० एल० बी० आदि शामिल हैं। ग्रामीण क्षेत्र की नारियों लिए डेयरी उद्योग, पशुपालन, मुर्गीपालन, मशरूम उत्पाद बांस-बेंत का कार्य, चटाई, पट्टियां व रस्सी निर्माण, बागवा तिलौड़ी दनौड़ी, नमकीन, दालकूट उद्योग, मिर्च-मसाला उद्यो चूड़ी उद्योग एवं उपभोक्ता वस्तुओं का व्यवसाय आदि उल्लेखन हैं।

निष्कर्ष रूप से यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि अ युगों से नारी के सामने रोजगार का ऐसा मुक्त एवं व्यापक क्षिति कभी नहीं आया था जैसा आज है। नारी को मिल रही भ सफलता में शिक्षा का बड़ा योगदान है। भारतीय नारी आज अप प्रतिभा और कठोर परिश्रम से आर्थिक आत्मनिर्भरता की दि में तेजी से बढ़ रही है। जैसे-जैसे उसके कार्यक्षेत्र की लक्ष्मण रे मिटती जा रही है वैसे-वैसे वह रोजगार से लेकर स्वरोजगार व्यापक क्षितिज पर अपनी पहचान बना रही है। भविष्य में प्रवृत्ति को गति देने के लिए आर्थिक विकास के नये मॉडल क्रियान्वित करने के दौरान हमें इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रख होगा कि हमारी रोजगारोन्मुखी ग्रामीण और लघु उद्योगों की म संस्कृति कहीं विकृत न हो जाए।

द्वारा इन्द्रदेव प्रसाद (ए०
सरिसताबाद
न्यूयार, पटना - 800

गरडाना जलोत्थान सिंचाई योजना

चेहरे पे मुस्कान और पलकों पे सजे स्वप्न

डा. प्रभात कुमार सिंघल

बुजुर्गों के झुर्री भरे चेहरों पर ताजगी, आंखों से टपकती आशा और विश्वास की नई किरण, नवयुवकों की पलकों पर सजे सपने, बात-बात में उनके गांव में आई जलोत्थान सिंचाई योजना पर खुशी का इजहार और खेत में पहली बार सोयाबीन लेने और गेहूं की खेती करने का अहसास और इस भाव की स्पष्ट चमक देखने को मिली गरडाना गांव के काश्तकारों के चेहरों पर।

"कल्पना भी नहीं की थी एक ऐसे दूरस्थ गांव में जहां आने-जाने तक का रास्ता भी नहीं है, बारानी खेती पर निर्भर रहना जिनकी नियति थी, वहां आज सरकार की जलोत्थान सिंचाई योजना से पूरे साल खेत में पानी देना संभव हो सकेगा।" यह विचार अपने खेत पर काम कर रहे पन्ना नाथ ने व्यक्त किये। चार भाइयों की सम्मिलित 18 बीघा जमीन में गत खरीफ में जीवन में पहली बार सोयाबीन की खेती की। एक बीघा से दो क्विंटल सोयाबीन की उपज हुई। इस बार रबी में धनिया और गेहूं की खेती की है।

जमालुद्दीन के खेत तक सिंचाई योजना का पाइप पहुंचा है। यहां सीमेंट का एक पक्का टैंक बनाकर चारों तरफ खेतों में धारों से पानी पहुंचाया जाता है। जमालुद्दीन, अब्दुल हुसैन, मोहम्मद हुसैन और सलामुद्दीन चारों भाइयों की 64 बीघा जमीन को इस योजना से पानी मिला है। गांव में प्रवेश करते ही हमें जमालुद्दीन मिले और योजना के बारे में बताने के लिए हमारे साथ हो लिए। रास्ते में कहने लगे, "यह योजना छोटे किसानों के लिए नई आशा लेकर आई है। हम केवल बरसात में ही खेती करते थे। अब इससे हम साल भर में तीन बार तक खेती कर सकते हैं। हमने भी पहली बार खेत में गेहूं बोया है।

अयूब, अब्दुल रहीम, बद्री मेघवाल, जुम्मा खां, लक्ष्मण, देवा नायक, हीरालाल, रामकुमार मेघवाल, मथुरा लाल मेघवाल तथा सुलेमान जिनके पास एक से सात बीघे तक जमीन है, ने भी इस बार गेहूं की खेती की है। सभी इस योजना को अपना भाग्य विधाता मानते हैं। योजना और अपनी बदलती खेती के बारे में बात करते समय आशा, आत्म-विश्वास और खुशी इनके चेहरे पर साफ नजर आती है।

गरडाना जलोत्थान सिंचाई योजना में काली सिंध नदी से करीब 38 मीटर ऊपर पानी लाया गया है। पन्द्रह-पन्द्रह अश्व शक्ति के दो पम्प लगाये गये हैं। नियंत्रण कक्ष तक 108 मीटर लम्बे 20 सें० मी० मोटे पाइप बिछाये गये हैं। इस योजना का निर्माण कार्य वर्ष 1990 में आरंभ हुआ और एक जनवरी 1993 को विद्युत कनेक्शन दिया गया।

जलोत्थान सिंचाई योजना का संचालन एक समिति करती है। समिति के वरिष्ठ सदस्य श्री पन्ना नाथ ने बताया कि इस योजना में 30 सदस्यों के 63 संयुक्त खेतों की 226 बीघा जमीन में सिंचाई की सुविधा है। इस बार रबी में पहली बार ही इस योजना के जल का भरपूर उपयोग हुआ है। अभी तक 210 बीघा जमीन में पानी दिया जा चुका है। योजना से 22 लघु एवं दो सीमांत काश्तकारों को लाभ पहुंचा है।

गरडाना कोटा जिले में पंचायत समिति सांगोद का एक दूरस्थ गांव है जो देवली से पांच किलोमीटर दूर है। देवली तक रास्ता पक्का है। इसके बाद कच्चे ऊबड़-खाबड़ मार्ग से होकर खेतों के बीच गुजर कर गांव तक पहुंचा जा सकता है। बरसात के दिनों में यहां आवागमन कई बार सड़क नहीं होने से बंद हो जाता है। गांव में करीब 13 वर्ष पहले बिजली आई। पीने के पानी के पांच सार्वजनिक एवं छः निजी हैंड पम्प हैं। गांव के समीप काली सिंध नदी है। ढाई सौ घरों वाले गांव में खेती योग्य कुल रकबा दो हजार बीघा है। शिक्षा के लिए यहां एक उच्च प्राथमिक विद्यालय है। यहां के निवासी खेती और मजदूरी ही प्रमुख रूप से करते हैं। आधी जनसंख्या अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग की है। आटा पीसने की दो चक्कियां हैं। गांव में परिवार कल्याण में भी रुचि देखने को मिली है। गांव में दो अथवा तीन बच्चों पर नसबंदी कराने के लिए नवयुवक आगे आये हैं। दस-बारह लोगों ने गांव में टी. वी. लगा लिये हैं। गांव में बाल विवाह प्रायः नहीं होते हैं। गांव में सभी पर्व मनाये जाते हैं परंतु तेजाजी का मेला विशेष उल्लास से भरता है।

सूचना एवं जन संपर्क अधिकारी,
सूचना केन्द्र,
कोटा - 324001 (राजस्थान)

पौष्टिक टमाटर : सेब गरीबों का

✍ डॉ० सीताराम सिंह 'पंकज'
अध्यक्ष, जंतु विज्ञान विभाग, के. सी. आर कालेज,
समस्तीपुर

टमाटर स्वादिष्ट और पौष्टिक है। इसे भारत ही नहीं विदेशों में भी बड़े चाव से खाया जाता है। भारत के विभिन्न भागों में इसकी खेती की जाती है। टमाटर को देहाती भाषा में विलायती बैंगन कहते हैं। कुछ लोग इसे "गरीबों का सेब" भी कहते हैं, सच पूछिए तो पोषण की दृष्टि से इसका महत्व सेब या संतरे से कम नहीं है।

संसार के सर्वाधिक ठंडे क्षेत्रों को छोड़कर टमाटर की खेती सर्वत्र की जाती है। टमाटर की अनेक प्रजातियां पायी जाती हैं। अधिकाश टमाटर गोल होते हैं किंतु कुछ छोटे और लंबे भी होते हैं। कच्चा टमाटर हरा और पका टमाटर खूबसूरत लाल या पीले रंग का होता है।

रासायनिक संगठन

अच्छी सेहत के लिये प्रतिदिन पांच-सात बड़े और पके टमाटर खाना बहुत लाभदायक है। टमाटर में शरीर के लिये महत्वपूर्ण विटामिन तथा खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। एक पके टमाटर में (प्रति 100 ग्राम), सोडियम 2.8 मि० ग्रा०, पोटाशियम 2.88 मि. ग्रा., मैगनीशियम 11.0 मि. ग्रा., लोहा 0.43 मि. ग्रा., तांबा 0.10 मि. ग्रा., फास्फोरस 21.3 मि. ग्रा., गंधक 10.6 मि. ग्रा. तथा क्लोरीन 51.0 मि. ग्रा. पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त टमाटर में विटामिन 'ए', 'बी', 'सी', 'ई' 'के' तथा अन्य कई तत्व भी मिलते हैं।

कच्चे तथा पके टमाटर की तुलनात्मक रासायनिक संरचना निम्नलिखित तालिका में दी गई है :-

विटामिन मि० ग्रा०/100 ग्रा०	कच्चा टमाटर	पका टमाटर
एस्कारिबक अम्ल (विटामिन "सी")	31.0	32.0
रिबोफ्लोविन	0.06	0.06
थाइमिन	0.06	0.12
निकाटिनिक अम्ल	0.4	0.4

खनिज लवण मि० ग्रा०/100 ग्रा०	कच्चा माल	पका टमाटर
लोहा	2.4	0.9
फास्फोरस	40.0	20.0
कैल्शियम	20.0	10.0
वर्णक (अ० ई० में) कैरोटीन (विटामिन "ए" के रूप में)	320 अ० इ०	320 अ० इ०

कच्चा व पका टमाटर

कच्चे टमाटर में मांड, लोहा व कैल्शियम की प्रचुरता होती है, जबकि पके टमाटर में ग्लुकोज, फ्रक्टोज एवं सुक्रोज की अधिकता होती है। दूसरे शब्दों में टमाटर के पकने पर उसमें मांड की मात्रा घट जाती है तथा शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है।

टमाटर का खट्टापन उसमें वर्तमान विटामिन "सी" (एस्कारबिक अम्ल) के कारण होता है। टमाटर में विभिन्न विटामिनों एवं खनिज लवणों के अतिरिक्त एसिटिक अम्ल, लैक्टिक अम्ल, मेलिक अम्ल भी कुछ मात्रा में पाये जाते हैं। कच्चे और पके टमाटर में लगभग सभी प्रमुख एमीनो अम्ल पाये जाते हैं, जो शरीर निर्माण के लिए अत्यन्त आवश्यक होते हैं।

आहार में टमाटर

हमारे दैनिक आहार में टमाटर विभिन्न रूप में प्रयोग किया जाता है। टमाटर सम्पूर्ण विश्व में भोजन का एक प्रमुख अंग बन गया है। प्याज, गाजर, मूली, अमरूद, संतरा आदि के साथ टमाटर मिलाकर स्वादिष्ट सलाद बनाये जाते हैं।

इसी तरह टमाटर की मीठी और नमकीन चटनी, सूप, जैली, कटलेट आदि भी बहुत जायकेदार और पौष्टिक होते हैं।

टमाटर में मौजूद खनिज लवण और विटामिन बच्चे, बूढ़े और सयाने सबके लिए समान रूप से पोषक और स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं।

(शेष पृष्ठ 42 पर)

5 जून पर्यावरण दिवस के अवसर पर

नदियों को निगलते उद्योग और महानगर

✍ मंजू पाठक

भारत में लगभग 19 हजार करोड़ घनमीटर जल उपयोग के लिए उपलब्ध है, जिसका 86 प्रतिशत नदियों, झीलों, रोवरों एवं तालाबों से मिलता है। किंतु वैज्ञानिकों के अनुसार कुल उपलब्ध जल का 70 प्रतिशत प्रदूषित हो चुका है। उत्तर की ल झील से लेकर दक्षिण में पेरियार एवं चालियार नदी तक पूर्व में दामोदर तथा हुगली से लेकर पश्चिम की ठाणा उप नदी तक जल प्रदूषण की स्थिति एक समान भयावह हो चुकी है। इस तरह दी जल प्रदूषण के मामले में भारत कश्मीर से कन्याकुमारी तक क-सा हो चला है।

भारत में नदी जल प्रदूषण का मुख्य कारण उद्योगों से निकला अपशिष्ट पदार्थ एवं नगरों से निःसृत मल मूत्र तथा गंदा जल एवं कचरा है, जो येन केन प्रकारेण अंततः नदियों में गिराया जाता है। उद्योगों के गंदे जल से होने वाले जल प्रदूषण से चार गुना जल प्रदूषण हमारी बस्तियों और नगरों से निःसृत गंदे जल एवं मल मूत्र से होता है।

अपने देश में एक वर्ष में 10 लाख व्यक्तियों पर 5 लाख टन सीवेज उत्पन्न होता है। भारत के 142 प्रथम श्रेणी के नगरों के 2.34 करोड़ लोग 32,35,240 किलोलिटर जल का उपयोग करते हैं, जिसका 25,88,190 किलोलिटर वाहित मल (सीवेज) बन जाता है। नगरों में कुल जलापूर्ति का 80 प्रतिशत वाहित मल बनता है, जबकि अपने देश में मल व्यवस्था सुविधा प्राप्त जनसंख्या 43 प्रतिशत और सुविधा विहीन जनसंख्या 57 प्रतिशत है तथा कुल उत्पन्न अपशिष्ट जल का मात्र 37 प्रतिशत ही उपचारित हो पा रहा है।

एक अनुमान के अनुसार महानगरों की घरेलू गंदगी प्रति व्यक्ति 120 लीटर होती है। गंगा तट पर स्थित नगरों से प्रतिदिन लाख टन गंदा जल गंगा नदी में मिलाया जाता है। इस तरह भारत में प्रतिवर्ष लगभग 4.1 घन किलोमीटर घरेलू गंदगी निकलती है, जिसका निस्तारण नदियों में ही किया जाता है। वर्तमान समय में गंगा नदी 20 करोड़ मानव और 21 करोड़ पशु वाले क्षेत्र में प्रवाहित होती है और इसके किनारे एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले 40 नगर प्रथम श्रेणी के और 60 से अधिक नगर द्वितीय श्रेणी के हैं, जिनका मल जल गंगा नदी में मिलता है। दिल्ली नगर द्वारा यमुना नदी से प्रतिदिन 120 करोड़ लिटर जल उपयोग किया जाता है, जिसका 80 प्रतिशत (96 करोड़ लिटर) गंदा जल होकर पुनः 17 खुले नालों द्वारा यमुना में मिलता है।

गंगा नदी के किनारे कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, भागलपुर एवं हावड़ा तथा कलकत्ता में अनेक तरह के बड़े, मध्यम और लघु उद्योग स्थापित हैं जिनका अपशिष्ट इस नदी में मिलता है। कानपुर में 45 चर्म, 20 सूती, 3 ऊनी, 2 पटसन उद्योग तथा अनेक रसायन तथा औषधि उद्योग और प्रयोगशालाओं का अपशिष्ट जल गंगा नदी में मिलता है। कानपुर में 4 करोड़ गैलन तथा वाराणसी में 1.5 करोड़ गैलन अपशिष्ट जल गंगा नदी में गिराया जाता है। गंगा नदी में होने वाले कुल जल प्रदूषण का 18 प्रतिशत कानपुर में, 5 प्रतिशत वाराणसी में और 4 प्रतिशत इलाहाबाद में उद्योगों से ही हो रहा है। फूलपुर (इलाहाबाद) के खाद कारखाने से प्रतिदिन 5500 घनमीटर अपशिष्ट जल गंगा नदी में मिलता है।

गंगा नदी की सहायक धारा हुगली का मुहाना कलकत्ता के चारों ओर स्थापित प्रमुख 150 कारखानों के अपशिष्ट से भरा है। इसके अतिरिक्त 361 नालों से शहर का गंदा जल निरंतर नदी में गिरता जा रहा है।

यमुना नदी के किनारे अनेक औद्योगिक नगरों का विकास हुआ है। दिल्ली के पास यमुना नदी में कागज, चीनी, चमड़ा, स्टील के बर्तन; पानीपत में ऊन, कागज, कालीन, चीनी; सोनीपत में सायकिल, कृषि उपकरण, रसायन, रबर; फरीदाबाद में इंजीनियरिंग, कांच, रबर, रसायन, चमड़े के सामान और दिल्ली में सूती, रसायन, विद्युत उपकरण, खाद्य पदार्थ, प्लास्टिक आदि उद्योगों का अपशिष्ट यमुना नदी में मिलता है।

लखनऊ में स्थापित कागज तथा लुग्दी उद्योग से 80 हजार घनमीटर गंदा जल गोमती नदी में प्रतिदिन मिलता है। इसके अतिरिक्त शहर का गंदा जल भी नालियों द्वारा बिना उपचारित किए ही गोमती में गिराया जाता है।

केरल के पेरियार नदी के निचले किनारे पर रासायनिक खाद, ायनिक वस्तुएं, धातुओं तथा रेयन के अनेक कारखानों से 17 ोड़ लीटर से अधिक रासायनिक द्रव्यों से युक्त अपशिष्ट यार नदी में गिरता है।

मध्य प्रदेश के रतलाम में शराब संयंत्र से प्रतिदिन 52,000 न विषैला जल निःसृत होता है। प्रायद्वीपीय भारत की नदियां चमड़े, रसायन और इस्पात के कारखानों से प्रदूषित हो रही चंबल नदी का जल कोटा में स्थापित रासायनिक खाद, परमाणु जली घर और ताप विद्युत गृह के अपशिष्ट से प्रदूषित हो रहा दामोदर नदी तो आसनसोल-दुर्गापुर औद्योगिक संश्लिष्ट क्षेत्र ही होकर गुजरती है जिसमें 40 लाख गैलन विषैला जल कल रखानों से गिराया जाता है।

वाराणसी में इतने अधिक रोगजन्य पदार्थ गंगा में प्रवाहित ए जाते हैं कि प्रति 100 लीटर जल में कोलीफार्म बैक्टीरिया मात्रा 2400 तक पहुंच गयी है, जबकि पेयजल में इनका अभाव ना है एवं औद्योगिक कार्यों के लिए प्रयुक्त जल में इनकी संख्या 0 से अधिक नहीं होनी चाहिए। दिल्ली और आगरा में यमुना ी के जल में बी० ओ० डी०. की मात्रा बहुत अधिक हो गयी एवं कोलीफार्म की संख्या भी प्रति मिलीलीटर 1,50,000 से धिक हो गयी है। दिल्ली में 17 गंदे नालों द्वारा प्रतिदिन यमुना ी में 120 टन बी० ओ० डी०, 300 टन घुले ठोस कण पदार्थ ं 150 टन एस० एस० छोड़े जाते हैं।

गोदावरी नदी में राज महेन्द्री के पास कागज कारखाने से ःसृत कचरे के मिलने से पानी पर अल्यूमिनियम हाईड्राक्साइड परतें फैल गयी हैं। इसकी सहायक नदी सोनी ताप विद्युत ह से निःसृत ऊष्ण जल के मिलने से इतनी प्रदूषित हो गयी कि वहां मछलियां जीवित नहीं रह पा रही हैं। कृष्णा नदी की हायक भद्रा नदी भ्रदावती स्थित कागज, लुग्दी, एवं इस्पात के ारखाने के अपशिष्ट से प्रदूषित हो रही है। हरिहर पोले फाइबर क्ट्री के कारण तुंगभ्रदा एक भयानक प्रदूषित नदी हो गयी है। ावेरी में कागज, रासायनिक, शराब, चमड़ा एवं भारत हैवी लेक्ट्रिकल्स से निःसृत घातक अपशिष्ट एवं कचरा मिलता है, जिससे जल का रंग ही बदल गया है। नर्मदा नदी में होशंगाबाद हित अन्य नगरों का गंदा जल, कागज मिल के अपशिष्ट के लने से इतना प्रदूषित हो गया है कि स्नान करने से चर्म रोग और पीने से आंत की बीमारियां हो रही हैं। ताप्ती नदी की भी ही स्थिति है।

तटवर्ती नदियों में पैरियार के किनारे रसायन द्रव्यों और रासायनिक खाद तथा रेयन के कारखाने हैं, जिनसे धातु, यूरिया, अमोनिया, फ्लोराइड, क्लोराइड और अन्य रासायनिक द्रव्यों से युक्त 17 करोड़ लीटर से अधिक विषैला जल मिलता है। इससे जल इतना प्रदूषित हो गया है कि जल के अंदर की वस्पतियों एवं जल जीवों के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है।

मध्य प्रदेश में कागज, लुग्दी, शराब और कपड़े के लगभग 225 कारखानों से 67 करोड़ 50 लाख लीटर अपशिष्ट निःसृत होता है जो विभिन्न नदियों में गिराया जाता है। खान नदी में इंदौर के गंदे नाले और उद्योगों का 30 लाख 50 हजार लीटर अपशिष्ट गिरता है, जिससे इसके जल का 75 प्रतिशत भाग रोगाणुओं से भरा पड़ा है जिससे जल में बी० ओ० डी० की मात्रा में वृद्धि हो गयी है और घुली आक्सीजन की मात्रा भी शून्य ही गयी है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत की कोई भी नदी ऐसी नहीं है, जिसके किनारे कोई नगर बसा हो या उद्योग स्थापित हो और वह प्रदूषित न हुई है। इन नदियों में स्नान करने से अनेक तरह के चर्म रोग हो सकते हैं और जल को पीने से अनेक तरह की बीमारियां पैदा होने का डर है।

इन प्रदूषित नदियों का जल न केवल मानव बल्कि पशुओं एवं वनस्पतियों के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। प्रदूषित जल में रहने वाले जीव मरने लगे हैं तथा वनस्पतियां भी सूखने लगी हैं।

यद्यपि नदी जल प्रदूषण को रोकने हेतु अनेक कारगर उपाय किए जा रहे हैं जिसके तहत विभिन्न नदियों के लिए कार्य योजना स्वीकृत कर अपशिष्ट जल को नदी में गिरने से रोका जा रहा है तथा उस गंदे जल को साफ कर उसे सिंचाई, मत्स्य उद्योग एवं जल जीव सम्वर्द्धन के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। इसके तहत सर्वप्रथम गंगा कार्य योजना तैयार की गयी जिसको क्रियान्वित करने के लिए 1985 में गंगा सफाई प्राधिकरण बनाया गया और 260 करोड़ रुपये स्वीकृत किए गए। इसी तरह यमुना, गोमती तथा दक्षिण भारत की प्रदूषित नदियों के लिए भी कार्य योजना तैयार कर उसको क्रियान्वित किया जा रहा है।

यद्यपि विभिन्न प्रदूषित नदियों को प्रदूषण से बचाने हेतु तैयार की गयी कार्य योजना के क्रियान्वयन पर काफी पैसा खर्च किया जा रहा है और सरकार ने यह दावा भी किया है कि खासतौर से गंगा नदी जल प्रदूषण में काफी कमी आ गयी है, किंतु जितना पैसा खर्च किया गया, उसकी तुलना में कार्य उतना नहीं हुआ है।

(शेष पृष्ठ 38 पर)

उत्तर प्रदेश में ग्रामीण विकास में पंचायत राज का योगदान

✍ डा० मनेश कुमार पाठक

देश की आजादी का अर्थ मात्र राजनीतिक आजादी नहीं है। उसका अर्थ शहरी लोगों को आजादी भी नहीं है। वास्तविक आजादी वह होगी जिसमें ग्रामवासियों को अपने भाग्य, अपने भविष्य के निर्माण का स्वामित्व प्राप्त होगा। यह उनके स्वशासन के जरिये ही हो सकता है और इसी का अर्थ है "पंचायती राज"।

महात्मा गांधी ने ग्राम स्वराज्य के अंतर्गत लोक कल्याण द्वारा राज्य की स्थापना हेतु गांवों में पंचायतों की स्थापना पर जोर दिया था। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु भारतीय संविधान के 40वें अनुच्छेद में अंकित है –

"राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा एवं उनको ऐसी शक्तियां तथा अधिकार देगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक है।"

इस संकल्प के तहत ही राज्य सरकार सत्ता के विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य से लोकतंत्र की मूल इकाई ग्राम पंचायतों को सुदृढ़, सशक्त और जन आकांक्षाओं के अनुरूप बनाने के लिए कृत संकल्प है। पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत संगठित जिला परिषदों, क्षेत्र समितियों और ग्राम पंचायतों का ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों में अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त किया जा रहा है। इन संस्थाओं को विकास कार्यक्रमों से सीधे सम्बद्ध कर कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का और अधिक उत्तरदायित्व सौंपा गया है। पंचायतीराज संस्थाओं में अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा महिलाओं का उचित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया गया है।

उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने और प्राथमिक पाठशाला भवनों के निर्माण जैसे प्रयासों में पंचायतों को सक्रिय भूमिका दी गई है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में सफाई रखने के लिए शौचालयों के निर्माण की एक महत्वाकांक्षी योजना का कार्यान्वयन भी पंचायतों को सौंपा गया है। इस कार्यक्रम में शौचालयों का निर्माण ग्रामीण महिलाओं और वृद्धों की सुविधा के लिए किया जा रहा है। इससे गांवों का वातावरण स्वच्छ बना है व दूषित वातावरण से उत्पन्न होने वाली बीमारियों से भी बचाव हुआ है। इसके अतिरिक्त इन्हें पंचायतराज विभाग के कर्मचारियों और पदाधिकारियों के प्रशिक्षण, पंचायत भवनों के निर्माण, हाट बाजार और मेलों में सुधार, पंचायत उद्योग कार्यशालाओं का निर्माण, पंचायत उद्योगों को तकनीकी और प्रबंधकीय सहायता, ग्राम सभाओं को अपनी आय में वृद्धि हेतु प्रोत्साहन, ग्राम सभा स्तर पर खड़ंजे एवं नाली निर्माण तथा ग्राम पंचायत अधिकारियों के आवासीय भवनों की निर्माण योजनाओं के कार्यान्वयन का दायित्व सौंपा गया है।

पंचायतराज विभाग के योजनागत कार्यक्रम के अंतर्गत 1991-92 में आवंटित धनराशि से 29 पंचायत उद्योग कार्यशाला भवन और 149 ग्राम सभा स्तर पर पंचायत भवनों के निर्माण का कार्य पूरा किया गया। इसके अतिरिक्त 2000 पंचायत पदाधिकारियों, 95 ग्राम पंचायत अधिकारियों, पंचायत उद्योग के 120 प्रबंधकों तथा पंचायतों के 33 सहायक विकास अधिकारियों को पंचायत राज अधिनियमों तथा नियमों, लेखा अभिलेखों के रख-रखाव आदि का प्रशिक्षण दिया गया।

विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत आंवटित धनराशि से मैदानी क्षेत्र में 68471 और उतरांचल क्षेत्र में 11119 शौचालय, 103 विद्यालयों में सामुदायिक शौचालय, 239 पंचायत भवन, पंचायत उद्योगों की 22 कार्यशाला तथा 299 अम्बेडकर ग्रामों में खड़ंजे नालियों का निर्माण कराया जा सका। अच्छा कार्य करने वाली 167 ग्राम सभाओं को प्रोत्साहन देने के लिए पुरस्कृत किया गया।

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के साधन बढ़ाने और पंचायतों की आय में वृद्धि के लिए ग्राम पंचायतों की संयुक्त समितियों द्वारा स्थापित पंचायत उद्योगों को सशक्त और सुदृढ़ बनाया जा रहा है। पंचायत उद्योग न केवल ग्रामीण रोजगार के साधन हैं बल्कि इनसे ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है। जिसमें लकड़ी और लोहे से बनी वस्तुओं और खेती के काम आने वाले औजारों को प्राथमिकता दी जाती है। वर्ष 1991-92 में पंचायत उद्योगों के माध्यम से 2052.05 लाख रुपये मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन किया गया। इसके अलावा बिक्री द्वारा 109.11 लाख रुपये का लाभ कमाया गया है। वर्ष 1992-93 के लिए पंचायत उद्योगों के उत्पादन का लक्ष्य 22 करोड़ रुपये रखा गया था जिसे प्राप्त कर लिया गया है।

विभिन्न जनपदों में आयोजित ग्राम प्रधान सम्मेलनों में प्रधानों को परिचय पत्र दिये जाने की मांग की जा रही है। ग्राम तथा

(शेष पृष्ठ 40 पर)

खेती के लिए जैविक खादें

✍ अभय कुमार जैन

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में हरित क्रांति आई है, अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों को विकसित करके रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से हमने कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व बढ़ोतरी की है।

हमारे देश में जैविक खाद पर आधारित बढ़िया खेती पुराने जमाने से होती आ रही थी, किंतु अब उसे छोड़कर रासायनिक खेती जोर पकड़ती जा रही है। मिट्टी के प्राणतत्व की प्राकृतिक क्रियाओं से मेल रखते हुए कृषि करने के तरीकों की किसी को भी चिन्ता नहीं है। हम तेजी से स्थायी कृषि की पद्धतियों को भूलते जा रहे हैं। मिट्टी का जो हमारा अटूट भंडार है उसे हम जल्दी से जल्दी खत्म करने पर आमदा हैं।

बहुधा लोगों की यह धारणा है कि भरपूर फसल तथा अधिकाधिक उपजाऊ खेती के लिए आधुनिक साधनों जैसे यंत्रों, मशीनों, रासायनिक खादों तथा कीटनाशक दवाओं का इस्तेमाल किया जाना आवश्यक है। विश्व के विकसित देशों में कृषि के नये तौर तरीकों को ही काम में लाया जाता है किंतु बहुत कम लोगों को यह बात मालूम होगी कि पिछले कुछ सालों में अमरीकी किसानों में खेती के प्राकृतिक तरीके दिन प्रतिदिन लोकप्रिय होते जा रहे हैं। वहां के लोगों का यह विश्वास प्रबल होता जा रहा है कि खेती के आधुनिक तरीकों से फसल की पैदावार बढ़ी है, किंतु इसकी उन्हें बहुत कीमत चुकानी पड़ी है। मीलों फैली हुई अमरीकी खेती की उपजाऊ भूमि रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के निरंतर प्रयोग से धीरे-धीरे पत्थर होती जा रही है। अमरीका के कृषि विभाग के भूमि संरक्षक ने "हमारी बची हुई भूमि" नामक पुस्तिका प्रकाशित कर उसमें रायायनिक खादों के भूमि पर पड़ने वाले कुप्रभावों का विस्तृत वर्णन किया है। उसमें दिए गए आंकड़े बड़े भयंकर है। अनुमान है कि रासायनिक खादों के उत्पादकों के दबाव या अन्य किसी कारण से उस पुस्तक का दुबारा प्रकाशन नहीं हो सका है।

अमरीका के 17 लाख किसानों में से लगभग 20 हजार जो अन्न के मुख्य उत्पादक हैं, अब जैविक खाद पर आधारित खेती करने लगे हैं। ऐसी धारण है कि आगामी वर्षों में यह प्रवृत्ति खूब प्रचारित होगी। इसके विपरीत हमारे देश में उत्पादन वृद्धि के नाम पर जो अनर्थ हो रहा है उसमें रासायनिक खाद का अंधाधुंध प्रयोग भी एक है। विडम्बना है कि हमारे देश में उन रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का भरपूर उपयोग हो रहा है जिन पर कि पश्चिम देशों में प्रतिबंध है। इसमें कोई दो मत नहीं कि कृषि पद्धति में यंत्रों, रसायनों एवं कीटनाशकों का महत्वपूर्ण योगदान है, किंतु जिस गति से हम अपने परम्परागत साधनों को भूलते जा रहे हैं वे चिंतनीय हैं। हमें कृषि के ऐसे तरीके अपनाने चाहिये जो स्थानीय रूप से उपलब्ध जैविक साधनों का पूरा उपयोग करें। इससे न केवल पर्यावरण की समस्या सुलझेगी बल्कि वे किसानों के लिए आर्थिक रूप से अधिक लाभदायक होंगे क्योंकि उन्हें कई पदार्थ अपने खेत, अपने पशुओं और अपने आसपास के स्थानों से प्राप्त हो जाएंगे। हमारे देश में परम्परागत जैविक खादें प्रचुर मात्रा में है, किंतु उनका पूरा-पूरा उपयोग नहीं हो पाता है। गन्ने की खोई, धान की भूसी, समुद्री शैवाल, लकड़ी के बुरादे व खरपतवार का एक बहुत बड़ा हिस्सा बेकार चला जाता है। जितना ध्यान हम रासायनिक खाद के इस्तेमाल पर दे रहे हैं, यदि उसका दस प्रतिशत भी जीवाणु खाद पर दें तो ये प्राकृतिक साधन हमारे लिए वरदान सिद्ध हो सकते हैं।

किसानों की असावधानी और उचित मार्गनिर्देशन के अभाव में गोबर, मूत्र व अन्य खादोपयोगी सामग्री का उतना उपयोग नहीं हो पाता है जितना कि होना चाहिये। हम प्रतिवर्ष ईंधन के रूप में 40 करोड़ टन गीला गोबर प्रयोग करते हैं इसके कारण इतनी खाद नष्ट हो जाती है जितनी कि सिंदरी उर्वरक जैसी आठ फैक्ट्रियां मिलकर हर वर्ष तैयार करती हैं। हमारे देश में अनुमानतः 34 करोड़ मवेशी हैं एवं यदि गोबर व मूत्र की पूरी मात्रा खाद के रूप में उपयोग की जाए तो एक करोड़ टन अतिरिक्त अनाज पैदा हो सकता है।

एक अमरीकी किसान रोटमैन ने अपना अनुभव बताते हुए कहा कि उसका 320 एकड़ का खेत है। उसे एक फिल्म देखने का अवसर मिला जिसमें दिखाया गया था कि किस तरह अमरीकी किसान को अपने खेत की जमीन में माथा-पच्ची करनी पड़ती है और कैसे रासायनिक खाद और कीटनाशक दवाएं जमीन को सख्त बना रहीं हैं।

बस उसी दिन से रोटमैन को अपने खेत की समस्या का समाधान समझ में आ गया और उसने खेती के वैज्ञानिक तौर

तरीकों को छोड़कर प्राकृतिक तरीके से खेती करना शुरू कर दिया, उसने गोबर की खाद अपने खेत में डाली तथा मौसम के अनुसार विभिन्न प्रकार की फसल उगाना शुरू किया। इस तरह उसे अपने पौधों के लिए नाइट्रोजन ऊपर से उपलब्ध कराने की जरूरत नहीं रही। उसी के शब्दों में प्राकृतिक खेती के तरीके अपनाने से जमीन में लाखों की संख्या में आप से आप ऐसे सूक्ष्म जीव प्राप्य हो गए हैं जिन्होंने ये काम स्वयं किये और वह भी बिना कुछ खर्च के किये।

प्राकृतिक खाद से जमीन इतनी नरम हो गई है कि बरसात का पानी ऊपर से बाहर निकलने के बजाय जमीन के अंदर रिसकर अंदर जाने लगा। रोटमैन का कहना है कि अब "मैं प्रकृति के साथ मिलकर काम कर रहा हूं न कि इसके विपरीत"।

रोटमैन को प्राकृतिक खेती के तरीके अपनाने से भारी लाभ हुआ है। उसके खेतों में पैदा होने वाले उपज की मात्रा अब भी पहले जितनी है जबकि लागत में काफी कमी आ गई है। उसकी जमीन इतनी नरम हो गई है कि फसल बोने योग्य हो गई है और जुताई का कार्य बहुत सरल हो गया है। जमीन में जलग्रहण की क्षमता भी काफी बढ़ गई है। अतः उसे अपने खेतों के लिए कम पानी की आवश्यकता रहती है। जमीन पर पपड़ी आने की समस्या भी काफी दूर हो गई।

रासायनिक खाद का उपयोग करने वाले को यह धारणा रहती है कि उनके द्वारा मिट्टी में डाली गई सम्पूर्ण खाद पौधे ने ग्रहण कर ली है किंतु यह एक गलतफहमी है। वास्तव में रासायनिक खाद का एक हिस्सा तो पौधे शोषित कर लेते हैं किंतु बचा हुआ भाग मिट्टी में उपस्थित अनेक पदार्थों से मिलकर अत्यन्त हानिकारक तेजाब का निर्माण करता है। रायायनिक खादों से निर्मित यह तेजाब पौधों की जड़ों को नुकसान पहुंचाने के साथ फसलों के कई प्राकृतिक सहयोगी बेक्टिरिया केचुओं को नष्ट कर देता है। देशी खाद के उपयोग से हम न केवल अपनी जमीन की उर्वरकता बनाए रखने में कामयाब हो सकेंगे बल्कि रासायनिक उर्वरकों पर होने वाले भारी खर्चे में भी कटौती कर सकेंगे। यह धारणा है कि प्राकृतिक तौर तरीकों से पैदा हुई चीजें रासायनिक उर्वरकों से पैदा की गई चीजों से कहीं ज्यादा अच्छी होती हैं। एडेनबेल ने अपनी पुस्तक "खेत के लोग" में लिखा है कि रासायनिक खाद देकर पैदा हुई चीजें देखने में चाहे कितनी ही सुंदर और आकर्षक लगें, उनमें प्राकृतिक खाद के समान ओज स्वत्व और जीवन शक्ति नहीं है।

"तृप्ति" बन्दा रोड
भवानी मण्डी (राज०)

(पृष्ठ 35 का शेष)

आज सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने दायित्व को समझे। चाहे उद्योगपति हों चाहे नगरवासी हों, चाहे कोई भी हो, हम कोई ऐसा कार्य न करें जिससे नदी जल प्रदूषण को बढ़ावा मिले। साथ ही साथ उन उद्योगों पर कड़ा से कड़ा दंड लगाना होगा जो कचरे को बिना उपचारित किए नदियों में छोड़ते हैं। प्रदूषण के भयावह परिणाम से आम जनता को अवगत कराना होगा, ताकि जनता द्वारा कम से कम कचरा और गंदा जल नदियों में छोड़ा जाए। यदि समय रहते नदी जल प्रदूषण को नहीं रोका गया तो वह दिन दूर नहीं कि ये सदानीरा जीवनदायिनी नदियां हमारे लिए अभिशाप बन जायेंगी और हम कुछ नहीं कर पायेंगे।

ग्राम पो० - नगवा
जिला - बलिया (उ० प्र०)
पिनकोड - 277401

आर्थिक उदारीकरण पिछड़े वर्ग व पिछड़े क्षेत्रों के परिप्रेक्ष्य में

हिम्मत सिंह

आर्थिक उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में शासन का विकेन्द्रीकरण और आर्थिक उदारीकरण दोनों में विरोधाभास नजर आता है। सारा धन उदारीकरण के कारण कुछ व्यक्तियों व संस्थाओं में केन्द्रित हो जायेगा। केन्द्र सरकार के पास दायित्व अधिक हैं धन का अभाव है, विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में वह अपने निहित दायित्वों का विकेन्द्रीकरण कर सकती है। लेकिन विकेन्द्रीकृत संस्थानों के पास धन के संग्रहण के लिये संसाधनों की कमी है। तब ये विकेन्द्रीकृत संस्थाएं व्यावहारिक रूप में अधिकार विहीन दायित्वमुक्त संस्थाएं साबित होंगी।

इसलिये सरकार को चाहिए कि करों का आधार व्यापक बनाया जाए व केन्द्र कोष के लिये अधिक से अधिक धन प्राप्त किया जाए ताकि पिछड़े व दूरस्थ क्षेत्रों और कमजोर वर्गों में इसका वितरण संभव हो। केन्द्रीय योजनाओं के तहत संसाधनों का समान वितरण सुनिश्चित होना चाहिए। निजीकरण की प्रक्रिया में चाहे उद्योगों को पिछड़े क्षेत्रों में लगाने के लिए कितने ही प्रलोभन दिए जाएं। निजी क्षेत्र को अपनी मुख्य मुनाफा आधारित अर्थव्यवस्था के कारण उनके वहां पर उद्योग लगाने की संभावना कम है। इसलिए सरकार को अभी धीरे-धीरे बढ़ना चाहिए तथा साथ ही पिछड़े वर्गों और पिछड़े क्षेत्रों में विकास की गति तेज करनी चाहिए। एक समान स्तर हो जाने पर सभी प्रतियोगी बन जाएंगे और समान आधार पर खड़े होकर अपना विकास एक उदारीकृत अर्थ व्यवस्था के तहत करेंगे।

आंकड़ों के अनुसार इस समय देश में 30 प्रतिशत व्यक्ति गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। उदारीकरण में एक प्रतिशत व्यक्तियों के पास नब्बे प्रतिशत व्यापार या आर्थिक क्रियाकलापों तक पहुंचने की संभावना है। गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों को समान आधार प्रदान करके शत-प्रतिशत उदारीकरण के लक्ष्य की तरफ अग्रसर होना चाहिए।

आर्थिक उदारीकरण अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता के लिए महत्वपूर्ण प्रक्रिया है लेकिन अंतर्राष्ट्रीय या विकसित देशों के प्रतिमान भारतीय या विकासशील देशों के परिप्रेक्ष्य में सही नहीं बैठते हैं। भारत जैसे विशाल देश में जिसमें विभिन्न जातियों, धर्मों, संस्कृतियों, भाषाओं, परंपराओं व रीति-रिवाजों के लोग निवास करते हैं। इन सभी को मद्देनजर रखकर ही कोई व्यवस्था सफल हो सकती है। विभिन्न माध्यमों से इन विभिन्नताओं का एकीकरण करने की दिशा में प्रयास होना चाहिए। विभिन्न दिशाओं से इस एकीकरण को तीव्रगति प्रदान की जा सकती है। आर्थिक विषमताओं को दूर करने सामाजिक विषमता, सम्प्रदायवाद, जातिवाद, छुआछूत व विभिन्न भेदभावों का अंत करना होगा। जनता को राजनीतिक प्रेरणा व राजनीतिक शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है। साक्षरता मिशन द्वारा चलाए जा रहे साक्षरता कार्यक्रमों के तहत उत्तर साक्षरता कार्यक्रमों में राजनीतिक व आर्थिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए और जनता को उनके अधिकारबोध, दायित्वबोध का ज्ञान कराना चाहिए।

आर्थिक उदारीकरण जिसमें अधिकारों का विकेन्द्रीकरण और खुला बाजार व्यवस्था जरूरी है, हमें इसके लिये सांस्कृतिक व मानवीय स्तर पर प्रयास करके उद्योगपतियों एवं निवेशकर्ताओं में राष्ट्रहित की भावना उत्पन्न करनी चाहिए ताकि वे राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य समझें। राष्ट्र तब तक विकास की दिशा में अग्रसर नहीं हो सकता है जब तक कि सभी समुदाय समान गति से नहीं बढ़ेंगे। आर्थिक सफलता के लिए एक सद्भावपूर्ण व शांतिमय सामाजिक वातावरण अपेक्षित है। इसके लिए उद्योगपतियों व श्रमिकों के बीच उचित समन्वय आवश्यक है। इसी समन्वय से उत्पादन में वृद्धि होगी।

केन्द्र सरकार द्वारा अपनी योजनाओं व विभिन्न बजटों में पिछड़े वर्गों व पिछड़े क्षेत्रों में निवेश संबंधी दी गयी रियायतें भी इस असमानता के वातावरण को दूर करने में काफी महत्वपूर्ण साबित होंगी। इसके साथ-साथ पिछड़े वर्गों और पिछड़े क्षेत्रों के लिए केन्द्र द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों के उचित क्रियान्वयन से समान आधार प्राप्त किया जा सकता है।

देश की अधिकांश आबादी ग्रामों में निवास करती है। ग्रामीण विकास की परिकल्पना काफी पहले की गयी थी। आज विभिन्न माध्यमों के द्वारा चाहे वो राजनीतिक विकेन्द्रीकरण हो, प्रायोजित कार्यक्रम हो, कुटीर व लघु उद्योगों का विकास हो, इन सभी के द्वारा ग्रामीण विकास की दिशा में सराहनीय प्रयास किये जा रहे हैं। विभिन्न योजनाएं जैसे रोजगार गारंटी योजना, प्रधानमंत्री की रोजगार योजना, महिला समृद्धि योजना तथा प्रचलित जवाहर रोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम व अन्य राज्यो

द्वारा आवश्यकतानुसार सामयिक स्थानिक योजनाएं चलायी जा रही हैं। लेकिन आज भी हम अपेक्षित लक्ष्यों को इसलिए प्राप्त नहीं कर पाये हैं क्योंकि जनसंख्या वृद्धि, निरक्षरता और स्वास्थ्य संबंधी बाधायें इनमें बाधक हैं। इनका उचित तरीके से निराकरण करके ही प्रयासों को गति प्रदान की जा सकती है।

ग्रामों में सुधार द्वारा असमानता को कम किया जा सकता है। श्रम पूंजी संबंधों के बीच झगड़े को रोका जा सकता है। आर्थिक बजट 1994-95 में भी श्रम केन्द्र रोजगार उत्पादन पर जोर दिया गया है। कुटीर उद्योग व लघु उद्योग श्रम आधारित होते हैं और उनमें अल्प पूंजी की आवश्यकता होती है। इसलिए सरकार के निर्देशन और मार्गदर्शन में से उद्योग विकास कर सकते हैं। इनके लिए निवेशकों और कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। इस कार्य में स्वयंसेवी संगठनों के कार्यकर्ता अपेक्षित सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

वर्तमान में परम्परागत तौर तरीकों का भारतीय ग्रामीण समाज में स्थान लगभग यथावत है। इस स्थिति में एक साथ आमूलचूल परिवर्तन के बारे में विचार करना जल्दबाजी में उठाया गया कदम होगा और किसी भी प्रगति में बाधा पैदा करने वाला साबित होगा। इसका आसान तरीका यह हो सकता है कि इन पारस्परिक धारणाओं में निहित वैज्ञानिक पहलुओं पर भी समुचित ध्यान देना चाहिए। उचित यह होगा कि भारतीय सांस्कृतिक परिस्थिति को मद्देनजर रखते हुए एक समन्वयकारी दृष्टिकोण अपनाया जाये।

अंत में यह कहा जा सकता है कि आर्थिक उदारीकरण की नीति भारत में आर्थिक असमानता को कम करके ही सफल हो सकती है। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों द्वारा इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए गरीबी रेखा के निर्धारण में सैद्धान्तिक कमियों का यथासंभव निराकरण किया जाना चाहिए जैसे कि गरीबी रेखा के निर्धारण के लिए अतिदीनता की स्थिति को निर्धारण न मानकर निर्धारण रेखा औसत आय के आसपास होनी चाहिए। इसलिए पहला हमला असमान वितरण व गरीबी उन्मूलन पर है। केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा निवेशकों को दिये गये प्रलोभन वांछनीय व सराहनीय हैं। इनके साथ ही स्वयं लाभार्थी वर्ग को भी उचित सहयोग देना चाहिए और विकास के इस पावन पर्व के अवसर पर स्वयं को भी पूर्णरूपेण सक्रिय रूप से सम्मिलित करना होगा। राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक, आर्थिक और विभिन्न स्तरों पर समुचित कदम उठाने आवश्यक हैं ताकि एक ओर की प्रगति दूसरे तरफ की अवनति से प्रभावित होकर नष्ट न हो जाए। इसलिए सभी दिशाओं में प्रयासों से ही अपेक्षित लक्ष्य तक पहुंचा जा सकता है और असमानता रूपी वृहद अंतराल को पाटा जा सकता है।

522, बरकत नगर,
टांक फाटक, टांक रोड,
जयपुर (राजस्थान)

(पृष्ठ 36 का शेष)

प्रधानों की विभिन्न विकास व अन्य कार्यक्रमों में उत्तरोत्तर बढ़ती हुई भूमिका और उतरदायित्वों पर गंभीरता से विचार करते हुए उन्हें विभाग द्वारा परिचय पत्र दिए जाने का निर्णय लिया गया। ग्राम प्रधानों को परिचय-पत्र दिए जाने कि व्यवस्था से सभा प्रधानों की विकास कार्यो में प्रभावी भूमिका सुनिश्चित करने में जहां एक तरफ सहायता मिली है वहीं दूसरी तरफ उनको पद की गरिमा के अनुरूप सम्मान भी मिलेगा।

न्याय पंचायत केन्द्रों पर किसान सेवा केन्द्रों की स्थापना की गई है। जहां प्रति सप्ताह वृहस्पतिवार को सभी विभागों के ग्राम स्तरीय कर्मचारियों की उपस्थिति में ग्रामीण क्षेत्र की स्थानीय स्तर की समस्याओं को स्वरित और स्थानीय स्तर पर ही समाधान करने में आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। किसान सेवा केन्द्रों की व्यवस्था और संचालन में पंचायत राज विभाग के ग्राम पंचायत अधिकारी और सहायक विकास अधिकारी को पंचायत की अहम जिम्मेदारी सौंपी गई है।

जवाहर रोजगार योजना, भू-राजस्व आदि के कार्यक्रमों के लिए राज्य सरकार द्वारा ग्राम सभा प्रधानों को धनराशि उपलब्ध की गई है जिससे प्रधानों ने अपने क्षेत्रों में विकास तथा निर्माण के कार्य कराए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश के ग्रामीण विकास में पंचायत राज संस्थाएं विशेष भूमिका निभा रही है।

प्राध्यापक, भूगोल विभाग,
महाविद्यालय दुबेछपरा,
बलिया (उत्तर प्रदेश) पिन - 2777205

ग्रामीण उपभोक्ता

बेहद जरूरी है जागरूकता

✍ हरि विश्नोई

1986 के बाद से ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता आंदोलन को तेज करने के लिए विशेष जोर दिया जा रहा है ताकि देश में उन करोड़ों उपभोक्ताओं को राहत मिल सके जो देश के पिछड़े हुए ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। आठवीं पंचवर्षीय योजना में उपभोक्ताओं में जागरूकता बढ़ाने के लिए विशेष प्रयास चल रहे हैं। इधर नागरिक आपूर्ति एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली के विषय में संसद की स्थायी समिति ने भी सिफारिश की है कि देश में राशन प्रणाली को यथावत ही रखा जाए।

यह प्रश्न सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत गेहूं, चीनी, चावल और मिट्टी का तेल आदि प्राप्त करने वाले लोगों की सुविधा से सीधा सरोकार रखता है। एक राय यह थी कि सम्पन्न वर्ग के लोगों को इस सुविधा से अलग कर देना चाहिए। सम्पन्न वर्ग से आशय बाद में उनसे लगाया गया जोकि आयकर देते हैं। इस पहलू से जुड़ा एक सच यह भी है कि सम्पन्न वर्ग के लोग राशन कार्ड का इस्तेमाल सस्ती दरों पर मिलने वाली वस्तुओं को खरीदने में प्रायः नहीं करते हैं। दूसरी बात यह भी है कि संपन्न वर्ग में कुल आबादी का बहुत छोटा-सा भाग ही आता है।

इधर हमारे गांव भी अब वैसे नहीं रहे हैं जैसे कि वे चौथे दशक में स्वाधीनता से पूर्व थे। ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता बढ़ी है। आज रेडियो, टी. वी., पत्र-पत्रिकाओं की सीधी पहुंच भी उन तक है। अतः उनके रहन-सहन और सोचने के ढंग में परिवर्तन हुए हैं तथा हो रहे हैं। नेशनल कौंसिल ऑफ एप्लाइड इकोनोमिक रिसर्च नामक संस्था ने पिछले दिनों एक सर्वेक्षण किया था। जिसकी रिपोर्ट में कुछ तथ्य बहुत चौंकाने वाले हैं। इस रिपोर्ट के आधार अनुसार देश की आबादी में 60 प्रतिशत हिस्सा जोकि निर्बल वर्ग कहा जाता है उसमें, टिकाऊ उपभोक्ता सामान खरीदने की प्रवृत्ति पाई गयी। इस उपभोक्ता सामग्री में 42 प्रतिशत हिस्सा मनोरंजन से जुड़े उपकरण थे।

इस बात से साफ जाहिर है कि रेडियो और टी. वी. पर आ रहे विज्ञापनों से हमारे देश में जिस तेजी के साथ उपभोक्ता संस्कृति फैल रही है उसकी परिधि में आज हमारे गांव, कस्बे और वे सब इलाके आ चुके हैं जिन्हें कुछ दशक पूर्व पिछड़ा हुआ माना जाता था। दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों मे बसे उपभोक्ता अर्ध-स्वचालित तथा बैटरी चालित उपकरणों में अधिक रुचि रखते हैं। यही कारण है कि आठवें दशक के बाद उपभोक्ता क्रांति का असर शहरों के अलावा हमारे देश के साढ़े पांच लाख गांवों में इस प्रकार पड़ा है कि महानगरीय चहल पहल से कटे हुए भोले-भाले ग्रामवासी बाजारोन्मुख दिखाई देते हैं। वे अब सशक्त खरीदार के रूप में दिखाई देते हैं। फलस्वरूप अधिकांश विज्ञापनों में गांव की झलक (उन्हें आकर्षित करने के लिए) साफ नजर आने लगी है। किन्तु ग्रामीण उपभोक्ता आज भी उतना जागरूक नहीं जितना कि उसे होना चाहिए।

सुप्रसिद्ध आई. एस. आई. क्वालिटी मार्क द्वारा उपभोक्ताओं को श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली वस्तुएं उपलब्ध कराने में भारतीय मानक ब्यूरो ने देश में बहुत उल्लेखनीय कार्य किया है। इस ब्यूरो ने क्वालिटी प्रमाणीकरण की योजना उन उद्योगों की मदद करने के लिए शुरू की जो उपभोक्ताओं के लिए बढ़िया क्वालिटी के उत्पाद तैयार करते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि ब्यूरो का प्रचार तंत्र ऐसा होना चाहिए जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों के आम उपभोक्ता भी मानक मोहर वाले उत्पादों की महत्ता से भली प्रकार परिचित हो जाएं तथा मोहरयुक्त किंतु घटिया सामग्री की शिकायत कर सकें।

ग्रामीण उपभोक्ताओं में उनके अधिकारों के प्रति चेतना एवं जागृति का शंखनाद करने के लिए स्वैच्छिक संस्थाएं, अध्यापक एवं छात्र महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ग्रामीण उपभोक्ता प्रायः अशिक्षित एवं भोले-भाले होते हैं। अतः इन्हें ठगा जाना एक आम बात है। इस पर प्रभावी अंकुश लगाने के लिए यह आवश्यक है कि उन तमाम उपभोक्ताओं को मुख्य बातों की जानकारी हो जोकि अपनी अनभिज्ञता के कारण अक्सर धोखाधड़ी के शिकार हो जाते हैं। निरक्षरता के कारण निःसंदेह यह कार्य अत्यंत जटिल और चुनौतीपूर्ण है। ग्रामीण उपभोक्ताओं का आकर्षण पैकेटबंद वस्तुओं की तरफ तेजी से बढ़ रहा है। आपरेशन रिसर्च ग्रुप के ताजा आंकड़ों से इस बात की पुष्टि होती है। इसके अनुसार भारतीय बाजार में पैकेटबंद चाय की कुल जितनी खपत होती है उसका 40 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा गांवों में जाता है। इसके अतिरिक्त 1985 में जहां ग्रामीण क्षेत्रों में पैकेटबंद वस्तुओं

की बिक्री 753 करोड़ रुपये के आसपास थी वहीं 1993 में वह बढ़कर 2083 करोड़ रुपये से भी अधिक हो गयी और आने वाले समय में यह और बढ़ेगी।

असल बात यह है कि ग्रामीण विकास के जितने भी कार्यक्रम अब तक चलाए गए हैं उनसे हमारे गांव वासियों को लाभ पहुंचा है। उनकी आय का स्तर बढ़ा है और वहां रोजगार के अवसर बढ़े हैं। अतः उनकी क्रय शक्ति में भी वृद्धि हुई है तथा निरंतर हो रही है। इसके अतिरिक्त कृषि उपज के समर्थन मूल्यों में वृद्धि भी इसका एक महत्वपूर्ण कारण रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में अब मांग और पूर्ति के चक्र ने बाजारों की गतिशीलता को बढ़ाया है। फलस्वरूप आज देश में बाजार के बहुत बड़े हिस्से के प्रमुख ग्राहक ग्रामीण जन हो गए हैं।

यद्यपि यह सच है कि जीत उपभोक्ता की होगी, बशर्ते वह जागरूक हो। लेकिन कटु सत्य यह भी है कि हमारे देश में अभी तक उपभोक्ता आंदोलन मुख्यतः नगरों तक केंद्रित रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रायः अधिकांश उपभोक्ता, बाजार में खरीदारी करते समय चौकन्ने नहीं रहते और इसी का लाभ उठाकर विक्रेताओं द्वारा उनका शोषण किया जाता है। समुचित जानकारी के अभाव में एक आम उपभोक्ता निःसहाय हो जाता है। अतः इस बारे में स्थिति बिलकुल स्पष्ट होनी चाहिए कि किन किन बातों पर कब ध्यान देना चाहिए और गड़बड़ी की स्थिति में कब क्या कदम उठाना है। उदाहरण के तौर पर चतुर उपभोक्ता खुली चीजों की अपेक्षा डिब्बा बंद वस्तुएं खरीदकर इस बात के प्रति आश्वस्त हो जाते हैं कि वे ठगे नहीं गए। लेकिन ऐसी बात नहीं है। डिब्बाबंद वस्तुओं के बारे में उपभोक्ताओं को सजग रहना चाहिए। हानि से बचने के लिए डिब्बाबंद वस्तु खरीदते समय ये बातें अवश्य देखें - निर्माता/पेकर का नाम पता, वस्तु का विक्रय मूल्य जो अधिकतम खुदरा मूल्य रुपये... सभी करों सहित के रूप में हो। निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य विक्रेता को न दें। विक्रय मूल्य में अब सभी कर शामिल हैं। जिन चीजों पर अधिकतम खुदरा मूल्य रुपये... सभी करों सहित" को बिगाड़ा, काटा या भद्दा किया गया हो तो उसे न खरीदें और यदि खरीद लिया हो तो कैश मीमों के साथ तुरंत शिकायत/सुझाव मापतोल विभाग को भेजें। डिब्बाबंद वस्तु नियमावली 1977 के अंतर्गत इस प्रकार का अपराध सिद्ध हो जाने पर व्यक्ति को पहली बार पांच हजार रुपये तक का जुर्माना तथा उसके बाद पुनः पकड़े जाने पर पांच साल तक की कैद और जुर्माना करने की व्यवस्था है।

उपभोक्ताओं को चाहिए कि वे रोजमर्रा की वस्तुएं खरीदते समय भी विशेष रूप से सावधानी बरतें। खासतौर पर कुछ बातों पर तो अवश्य ही ध्यान दें जैसे कि दुकानदारों तथा ठेली वालों की तराजू बाटों पर नाप तोल विभाग के निरीक्षक की सत्यापन मोहरों को देखें। केवल सत्यापित एवं प्रमाणित बाटों/तोलने के यंत्रों से खरीदारी करें। अमानक बांटों जैसे पत्थर, लोहे के टुकड़ों आदि से खरीदारी न करें। बिना सत्यापित/प्रमाणित बाटों, तोलने के यंत्रों का प्रयोग करना अपराध है। इस पर 2000 रुपये तक का जुर्माना हो सकता है। गलत/मिथ्या बाट, तोलने के यंत्रों को प्रयोग में लाना गंभीर अपराध है। इस पर प्रथम अपराध के लिए 6 माह से 2 वर्ष तक की कैद हो सकती है। दूसरे या इसके बाद के अपराध पर कम से कम एक वर्ष की कैद हो सकती है। कम तोलने पर/बेचने पर प्रथम अपराध में 5000 रुपये तक का जुर्माना तथा दूसरे या उसके बाद अपराध पर 5 वर्ष तक कैद जुर्माना दोनों हो सकते हैं। ये सभी बातें ग्रामीण उपभोक्ताओं की जानकारी में होनी चाहिए।

एच-88, शास्त्री नगर,
मेरठ - 250005 (उ० प्र०)

(पृष्ठ 33 का शेष)

यही नहीं अन्य फलों की तुलना में टमाटर बहुत सस्ता भी है। अतः इसका अधिकाधिक प्रयोग स्वास्थ्य के लिए अच्छा है।

टमाटर के औषधीय गुण

आयुर्वेद में टमाटर के औषधीय गुणों की चर्चा की गई है। इस के अनुसार टमाटर अम्लीय, शीतवीर्य, पाचक, दीपन एवं रक्तशोधक होता है। यह अतिसार, गठिया, बेरी-बेरी, सूखारोग, मधुमेह, हृदय की दुर्बलता में लाभदायी होता है।

टमाटर यकृत को उत्तेजित कर भूख जगाता है। यह स्मृति बढ़ाने वाला कब्ज निरोधक एवं रक्त विकारों को दूर करनेवाला है। निस्संदेह टमाटर एक बहु उपयोगी पोषक फल है। विटामिन एवं खनिज लवणों से भरपूर टमाटर को आहार में प्रतिदिन शामिल करना हमारे हित में है।

सोयाबीन : आहार भी औषध भी

✍ डा० विजय कुमार उपाध्याय

हमारे देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग आज गरीबी रेखा के नीचे की स्थिति में जीवन व्यतीत कर रहा है। ऐसे लोगों के लिए दूध, मांस, अंडे इत्यादि प्रोटीनयुक्त आहार प्राप्त करना कठिन है। गरीबों के लिये प्रोटीन का एक ही सस्ता स्रोत उपलब्ध है, दालें। परंतु हाल में हमारे देश में दलहनों की कीमतों में भारी बढ़ोतरी होने के फलस्वरूप अधिकांश गरीबों को दाल भी आसानी से नहीं मिल पाती है। औसत भारतीयों के आहार में वसा की भी कमी पायी जाती है, क्योंकि वसा के स्रोत भी महंगे हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि प्रोटीन तथा वसा की प्राप्ति के लिये किसी सस्ते स्रोत की खोज की जाए।

शरीर की रक्षा हेतु तीन तत्वों - प्रोटीन, विटामिन तथा वसा की विशेष आवश्यकता पड़ती है। ये तीनों तत्व सोयाबीन में समुचित मात्रा में उपलब्ध है। हाल में किये गये अध्ययनों से पता चला है कि इसमें 40 प्रतिशत प्रोटीन तथा 20 प्रतिशत वसा की मात्रा उपलब्ध है। अनेक विटामिन, कार्बोहाइड्रेट तथा कई आवश्यक खनिज जैसे लोहा, फॉस्फोरस इत्यादि भी इसमें समुचित मात्रा में पाये जाते हैं। इसके नियमित सेवन से शरीर की मांसपेशियों का अच्छा विकास होता है तथा शरीर स्वस्थ रहता है। यह शरीर का पोषण करने, उसकी वृद्धि करने, उसे पुष्ट रखने तथा उसकी प्रजनन क्षमता को सहारा देने में सक्षम है।

इस समय देश में सोयाबीन का वार्षिक उत्पादन लगभग 10 लाख टन है। इसका सबसे अधिक उत्पादन मध्य प्रदेश में होता है। इस राज्य में अभी लगभग 12 लाख हेक्टेयर जमीन में सोयाबीन की खेती की जा रही है। खेती के उन्नत तरीकों को अपनाने के लिये सरकार किसानों को हर तरह का प्रोत्साहन दे रही है। सोयाबीन का वार्षिक उत्पादन 10 लाख टन से बढ़ाकर 20 लाख टन किये जाने की योजना है।

अभी तक भारत में उत्पादित कुल सोयाबीन का अधिक भाग तेल निकालने के उपयोग में लाया जाता था। परंतु देश में प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थ की कमी को देखते हुए आवश्यकता इस बात की है कि इसका उपयोग पौष्टिक तत्वों से युक्त आहार के उत्पादन हेतु किया जा सके। इस संबंध में सरकार ने कई अनुसंधान संस्थानों की स्थापना की है। इन संस्थानों ने सोयाबीन से निर्मित कई प्रकार के खाद्य पदार्थ विकसित किये हैं।

सोयाबीन पौष्टिक एवं आदर्श खाद्य पदार्थ होने के साथ-साथ कई रोगों के लिये औषध का काम भी करता है। यदि किसी व्यक्ति को गाय या भैंस के दूध के प्रति एलर्जी हो तो उसे सोयाबीन से निर्मित दूध दिया जा सकता है। यह दूध कब्ज नाशक भी है और पेट को साफ कर शरीर को कई रोगों से सुरक्षित रखता है। इस दूध में लैक्टोबैसिलस ऐसिडोफीलस नामक जीवाणु मौजूद रहते हैं जो लैक्टो एसिड उत्पन्न कर पेट में स्थित अनेक रोगों के जीवाणुओं को नष्ट कर देते हैं। पेट में अम्लता (एसिडिटी) रोग पैदा होने पर सोयाबीन का उपयोग लाभकारी पाया गया है। इसकी वजह यह है कि अन्य अनाजों की तुलना में सोयाबीन में अम्ल की मात्रा आधे से भी कम रहती है। जहां अन्य अनाजों में अम्लता 60-80 प्रतिशत तक पायी जाती है, वहीं, सोयाबीन में यह सिर्फ 20-25 प्रतिशत तक ही रहती है।

सोयाबीन में फॉस्फोरस की काफी मात्रा मौजूद रहती है जिसके कारण इसका उपयोग मस्तिष्क तथा ज्ञान तंतुओं से संबंधित रोगों जैसे मिर्गी, हिस्टीरिया इत्यादि में लाभकारी पाया गया है। सोयाबीन में लेसीथीन भी मौजूद रहता है जिसके कारण टी० बी० रोग में इसका उपयोग लाभकारी पाया गया है। अनेक चिकित्सक हृदय रोग से ग्रस्त लोगों को खाना बनाने के लिये परिशोधित सोयाबीन का तेल उपयोग में लाने की सलाह लेते हैं, क्योंकि इसमें कॉलेस्टेरोल की मात्रा अन्य तेलों एवं घी की तुलना में काफी कम है। मधुमेह के रोगियों के लिये सोयाबीन एक उत्तम पथ्य माना जाता है, क्योंकि इसमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा काफी कम रहती है। गठिया तथा गुर्दे के रोगों में सोयाबीन का उपयोग लाभकारी पाया गया है।

आजकल सोयाबीन का उपयोग कई प्रकार की दवाओं के निर्माण में किया जा रहा है, विशेषकर ऐंटीबायोटिक दवाओं के निर्माण में। भारत में भी सोयाबीन से इस प्रकार की दवाओं का निर्माण किया जा रहा है।

सोयाबीन के रूप में प्रकृति से हमें एक अमूल्य निधि प्राप्त हुई है जिसका उपयोग आहार के साथ-साथ औषध के रूप में भी किया जा सकता है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका सेवन एक गरीब आदमी भी आसानी से कर सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि इस दिशा में अधिक से अधिक अनुसंधान किये जायें तथा सोयाबीन के आहार संबंधी एवं औषधीय गुणों की जानकारी लोगों को दी जाए।

प्राध्यापक, भूगर्भ इंजिनियरी कालेज,
भागलपुर - 813210

भीलवाड़ा में झींगा पालन

✍ श्याम सुंदर जोशी

अंतर्राष्ट्रीय बाजार में डिब्बा बंद एवं परिष्कृत खाद्य पदार्थों की बढ़ती हुई मांग तथा विदेशी मुद्रा अर्जन का प्रमुख स्रोत होने के कारण भारत सरकार झींगा पालन पर विशेष जोर रही है। अत्यधिक पौष्टिक क्षमता रखने के कारण झींगा मानव भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है। झींगा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में फ्रीजन प्रान, (बर्फ में जमाया हुआ) केन्डप्रान (डिब्बा बंद झींगा) और ड्राइ प्रान (सूखा झींगा) के रूप में बेचा जाता है। भारत से प्रतिवर्ष हजारों टन झींगा निर्यात कर करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की जा रही है।

झींगा, कीट समुदाय का एक जलीय प्राणी है जिसकी अधिकांश जातियां समुद्री पानी में पाई जाती हैं। कुछ जातियां समुद्र में गिरने वाली नदियों एवं उनसे लगने वाले स्वच्छ पानी के जलाशयों में भी पाई जातीं हैं। स्वच्छ पानी में पाई जाने वाली व्यावसायिक और अधिक उत्पादन देने वाली झींगा प्रजाति की खासियत यह है कि यह नदियों और जलाशयों के स्वच्छ पानी में ही जीवन गुजारती है लेकिन इनका प्रजनन और प्रारंभिक विकास नदियों के मुहानों पर जहां स्व और समुद्री पानी का मिश्रण होता है, वहां होता है। यही कारण है कि व्यावसायिक उपयोगिता की झींगा जातियां राजस्थान की नदियों व जलाशयों में उपलब्ध नहीं है।

राजस्थान में झींगा पालन की संभावनाओं का पता लगाने के लिए पिछले तीन वर्षों से प्रयास किये जा रहे हैं। इन्हीं प्रयासों के तहत भीलवाड़ा, उदयपुर एवं बांसवाड़ा जिले में कलकत्ता और भड़ूच (गुजरात) से झींगा बीज मंगाकर विभिन्न फार्म पोंडस और ग्रामीण जलाशयों में संग्रहण किया गया। इस दिशा में अब तक किये गये प्रयासों में व्यावसायिक दृष्टि से झींगा पालन में सफलता प्राप्त करने का श्रेय भीलवाड़ा जिले को जाता है। मत्स्य पालक विकास अभिकरण के माध्यम से जल कृषि विकास कार्यक्रम के तहत राज्य में पहली बार भीलवाड़ा जिले में झींगा मछली पालन का व्यावसायिक कार्यक्रम हाथ में लिया गया था जो अब फलवती होने लगा है।

दिसम्बर, 1992 में यहां करीब 45 हजार झींगा बीज भड़ूच (गुजरात) से लाया गया और जिले के 11 ग्रामीण जलाशयों मे संचय किया गया। इनमें से पांच जलाशय मौसमी होने के कारण अप्रैल-मई माह में सूख गये और इनमें छोड़े गये झींगे के बीज में भी कोई खास वृद्धि नहीं पाई गई जबकि शेष छह बारहमासी जलाशयों में से कान्या खेड़ी बांध, पांसल तालाब, चमनपुरा तालाब, बोरड़ा तालाब, मैजा तालाब, धांधोलाई तालाब को छोड़कर शेष जलाशयों में झींगा की बढ़वार अगस्त माह में 200 ग्राम तक पाई गई। जबकि दिसम्बर माह में 350 ग्राम तक पहुंच गई जो कि इसकी प्राकृतिक बढ़त के अनुरूप है। जलाशयों में छोड़े गये झींगो में पाई गई परिपक्वता सिद्ध करती है कि भीलवाड़ा जिले में झींगा पालन सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

झींगा पालकों में शामिल एक कृषक तालाब से 60 किलोग्राम झींगा निकाल चुका है जिसकी भीलवाड़ा मुख्यालय पर बिक्री से उसे 140 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से 8 हजार से अधिक की आय हुई। जबकि उसे कुल खर्च करने पड़े 1500 रुपये। अभी इस तालाब से तीस-चालीस किलोग्राम झींगा और प्राप्त होने की आशा है जिसे देखते हुए मत्स्य कृषक को एक वर्ष में अनुमानतः 10 हजार रुपये की अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकेगी। पांसल और बोरड़ा तालाब सहित अन्य जलाशयों से भी झींगा निकाला जा रहा है और बेचा जा रहा है।

अब तक किए गए प्रयासों से यह स्पष्ट हो गया है कि भीलवाड़ा जिले की प्राकृतिक परिस्थितियां और जलाशयों का पानी स्वच्छ पानी का झींगा पालन करने के लिए उपयुक्त है और जिले तथा राज्य में झींगा पालन कार्यक्रम को ग्रामीण रोजगार के रूप में अपनाया जा सकता है।

सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी
भीलवाड़ा - 311001 (राज०)

अपने पौष्टिक गुणों के
मानव-भोजन के
की मांग दिन-

डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/94
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

R.N. 706/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/94
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54